अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-40, अंक-03, 16-30 सितंबर, 2016

कोकराझार से कश्मीर 'शान्ति सद्भावना साइकिल यात्रा'

''हमें ऐसी युक्ति ढूंढ़नी चाहिए, जिससे शांति स्थापित हो, शांतिमय शक्ति पैदा हो और दुनिया के अत्यन्त कठिन मसले सुलझ जायें। ऐसा किये बगैर अहिंसा की शक्ति के प्रति दुनिया को विश्वास नहीं होगा।''

—विनोबा

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 40, अंक : 03, 16-30 सितंबर, 2016

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595
कार्यकारी संपादक
अशोक मोती
मो. : 9430517733

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India

विज्ञापन दर
पूरा पृष्ठ : 2000 रुपये
आधा पृष्ठ : 1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ : 500 रुपये

इस अंक में...

1. क्रांति यात्रा जारी है... 2
2. मैं विज्ञान के खिलाफ नहीं हूं... 3
3. विश्व शांति के आप रक्षक हैं... 5
4. जलते चिराग हैं विनोबा... 6
5. शांति सद्भावना साइकिल यात्रा... 7
6. विनोबा का पुरुषार्थ भूदान... 8
7. विनोबा के साथ दो दिन... 11
8. भक्ति और प्रेम के बिना शांति नहीं... 13
9. पंकज के रिहाई का सवाल... 14
10. सर्वोदय साधक कृष्णराज मेहता... 15
11. दलितों की ऊना अस्मिता यात्रा... 18
12. गतिविधियां व समाचार... 19
13. तीन कविताएं... 20

संपादकीय

क्रांति यात्रा जारी है

कोकराझार (असम) से कश्मीर तक जन-जागरण करने के लिए 'शांति सद्भावना साइकिल यात्रा' को हमारी शुभकामनाएं और अभिनन्दन।

आज समाज में बढ़ती हिंसा दो प्रकार की है। एक, राजसत्ता के द्वारा एवं राजसत्ता के खिलाफ। दूसरी, समाज में किसी एक वर्ग के तथाकथित प्रतिनिधि तबके द्वारा किसी अन्य वर्ग के खिलाफ। लेकिन दोनों तरह की हिंसा के पहले झूठ और प्रोपगण्डा के माध्यम से एक नफरत व अविश्वास की मानसिकता का निर्माण किया जाता है। बिना ऐसी मानसिकता के निर्माण के हिंसा के कृत्यों को न तो औचित्य प्रदान किया जा सकता है और न ही किसी तबके का समर्थन हासिल किया जा सकता है। हिंसा के पैरोकार तबके एक लम्बे समय तक झूठ एवं मनगढ़ंत घटनाओं व इतिहास का प्रचार-प्रसार करते रहते हैं।

शांति व सद्भावना के सिपाहियों के लिए एक बड़ी चुनौती इस मानसिकता को बदलने की है। झूठ व नफरत के हर प्रचार का पर्दाफाश निरंतर करते रहने की है। और यह स्थापित करने की है कि झूठ व नफरत की शैतानी शक्तियां अन्य समूहों से ज्यादा उन समूहों का नुकसान करती हैं, जिनके प्रतिनिधित्व का वे दावा करती हैं।

किसी भी मानवीय समूह का किसी अन्य मानवीय समूह से विरोध सत्य, न्याय व परस्पर सम्मान के आधार पर असम्भव है। टकराव खड़ा करने के लिए इन मूल्यों की तिलांजलि देना आवश्यक होता है। इसी कारण टकराव के मूल में दोनों या कम से कम एक पक्ष द्वारा इन मूल्यों का स्पष्ट मर्दन होता है। समूह के आम लोग इससे सहमत नहीं होते इसीलिए हिंसा का सहारा तथाकथित शत्रुओं के खिलाफ भी लिया जाता है और अपने समूह के अंदर के उन लोगों के खिलाफ भी लिया जाता है जो सत्य, अहिंसा, न्याय, शांति व सद्भावना के पक्षधर होते हैं। इस हिंसा के द्वारा ये तबके यह स्थापित करना चाहते हैं कि अपने समूह के वे एकमात्र प्रतिनिधि हैं। जोड़ने वाली शक्तियों को अपने कौम का द्रोही करार करते जाते हैं।

यह प्रक्रिया कितनी भी गैर लोकतांत्रिक क्यों न लगती हो, लेकिन लोकतंत्र के कानूनी व वैधानिक ढांचे में यानी राजनीतिक सत्ता में जाने का एक महत्त्वपूर्ण तरीका बन गया है। वोट बटोरने के अन्य तरीकों के कमजोर हो जाने के कारण या कभी-कभी सच्चे लोकतांत्रिक तरीकों से सत्ता हासिल करने की सम्भावना धूमिल होने के कारण, झूठ व नफरत द्वारा अवास्तविक पहचान खड़ा करना राजनीति के लिए सरल उपाय बन गया है।

इन सबके कारण सच्ची लोकशक्ति बने, सच्चे लोकसत्ता का निर्माण हो यह किसी के भी राजनीतिक हित में नहीं रह गया है। पूंजीवाद भी बुनियादी तौर पर लोकसत्ता के निर्माण का विरोधी रहा है। लोक समुदाय के निर्माण की सारी सम्भावनाओं को खत्म करने का काम पूंजीवाद (और आज का इसका संस्करण वैश्विक बाजार व वैश्विक पूंजी) कर रहा है। ऐसे में वैश्विक पूंजी व वैश्विक बाजार उन तबकों के साथ तब तक खड़ा रहता है जब तक स्वयं उसके अस्तित्व को खतरा न हो। ग्राम स्तर पर लोक एकता छिन्न-भिन्न होती जाय तथा बाजार की पैठ बढ़ती जाये—ऐसी सामाजिक शक्तियां निरंतर क्रियाशील हैं।

लोक स्तर की एकता को लोकसत्ता के निर्माण कार्य से जोड़ना होगा तथा राजसत्ता पर नियंत्रण के लिए प्रयत्नशील समूहों व वैश्विक पूंजी व वैश्विक बाजार के गठजोड़ का भी पर्दाफाश करना होगा। ऐसी शक्तियों के खिलाफ गांधीजी ने सत्याग्रह व वैकल्पिक रचना के कार्य को देश की आजादी की लड़ाई के साथ जोड़ दिया था। एक ओर यह झूठ, नफरत व हिंसा की बुनियाद पर बनी मानसिकता को बदलने का कार्य था तथा दूसरी ओर पूंजीवाद को उसकी समग्रता के साथ नकारने व विकल्प प्रस्तुत करने का कार्य भी था।

शांति सद्भावना यात्रा उसी विरासत को आगे ले जाने का एक साहसिक व ऐतिहासिक प्रयास है। जो साइकिल यात्रा में नहीं हैं वे भी इस अभियान में अपनी-अपनी जगह शामिल हैं। यही इस यात्रा की सफलता है। यह भौगोलिक दूरी तय करने की यात्रा नहीं है, 'क्रांति यात्रा' है।

बिमल कुमार

मैं विज्ञान के खिलाफ नहीं हूं

सृष्टि का ज्ञान विज्ञान है

❑ **विनोबा**

लोग कहते हैं कि विनोबा विज्ञान के खिलाफ है। लेकिन मैं विज्ञान के नहीं, यंत्रीकरण के खिलाफ हूं। लोगों की समझ में नहीं आता कि विज्ञान यंत्रीकरण से अलग है। सृष्टि के ज्ञान को विज्ञान कहते हैं। मैं उसे बढ़ाना चाहता हूं।

विज्ञान की मदद से बड़े यंत्र बनाये जाते हैं, वैसे छोटे यंत्र भी बनाये जाते हैं। केन्द्रित तथा विकेन्द्रित, दोनों प्रकार के साधन विज्ञान की मदद से बनाये जा सकते हैं। छोटी-सी घड़ी भी बनायी जा सकती है और बड़ा इंजिन भी। जैसे आत्मज्ञान एक स्वच्छ, शुद्ध विचार है और उसके अनुसार सोचना होता है कि जीवन का क्या उपयोग है; वैसे ही विज्ञान भी एक स्वच्छ, शुद्ध विचार है और वह हमें शरीर, सृष्टि आदि का ज्ञान प्राप्त करा देता है। असल में यंत्रयुग के साथ उसका कोई संबंध नहीं है। यंत्रीकरण से भिन्न कोई नयी व्यवस्था खड़ी करनी हो, तो उसमें भी विज्ञान सहायक होगा। यदि हम उसका उपयोग रचनात्मक कार्य के लिए करने का सोचते हैं, तो ऐसे छोटे-छोटे साधन बना सकते हैं, जिनका उपयोग मनुष्य अपने-अपने घरों में ही कर सकेंगे। इसलिए *'विज्ञान यानी यंत्रयुग' ऐसा भ्रामक खयाल नहीं कर लेना चाहिए। आज विज्ञान की युति पूंजीवाद के साथ हुई है; लेकिन विकेन्द्रित समाज-व्यवस्था हो जायेगी, तो विज्ञान की दिशा भी बदलेगी। हम जिस दिशा में जाना चाहेंगे, उसी के अनुसार विज्ञान की दिशा भी तय होगी।*

यंत्र-विवेक

सर्वोदय विचार में ग्रामोद्योग और यंत्रोद्योग भी परस्पर अविरोध से एक साथ रह सकते हैं। उनका क्षेत्र विभाजित करना होगा। किस क्षेत्र में ग्रामोद्योग रखा जाये और किस क्षेत्र में यंत्रोद्योग, यह तय करना होगा। ग्रामोद्योग व यंत्रोद्योग एक-दूसरे के विरोधी होने ही चाहिए, ऐसा नहीं है। दोनों का समन्वय कर सकते हैं।

यंत्र तीन प्रकार के होते हैं। एक संहारक यंत्र, दूसरा समयसाधक यंत्र व तीसरा उत्पादक यंत्र। जो शस्त्रास्त्र इत्यादि बनते हैं, उसका नाम है संहारक यंत्र। सर्वोदय में इनके लिए अवकाश नहीं। उनका हम विरोध करते हैं।

समयसाधक यंत्र संहार भी नहीं करते और उत्पादन भी नहीं करते, वे समय बचाते हैं। जैसे मोटर, रेल, हवाई जहाज आदि।

उत्पादक यंत्र दो प्रकार के होते हैं। एक प्रकार के यंत्र मनुष्य के श्रम की पूर्ति करते हैं। अपने हाथों से हम जो काम नहीं कर सकते, वह करने में वे यंत्र सहायता देते हैं। हम हाथ से सूत कातेंगे, तो हमारा काम पूरा नहीं होगा। प्रथम तकली से, फिर चरखे से ज्यादा मदद हुई, अब अंबर चरखों से उससे भी ज्यादा मदद मिलती है। इस तरह श्रम की पूर्ति जो यंत्र करते हैं, वे पूरक उत्पादक यंत्र हैं। पर जो यंत्र उत्पादन तो ज्यादा करते हैं लेकिन मजदूरों को बेकार करते हैं, वे हैं मारक यंत्र। पर कौन-सा यंत्र पूरक है और कौन-सा मारक, इसका निर्णय देश-काल की परिस्थिति के अनुसार बदलता रहेगा। अमेरिका में जो यंत्र पूरक होगा, वह हिन्दुस्तान में मारक हो सकता है। आज जो यंत्र मारक है, वह कल पूरक भी हो सकता है। इसका रूप कालामानानुरूप, स्थलमानानुरूप व परिस्थिति के अनुरूप बदलेगा। ट्रैक्टर अमेरिका में चल सकता है। अमेरिका में भूमि अधिक व मनुष्य संख्या कम है। इलिए मनुष्य की मदद में, उसकी पूर्ति में ट्रैक्टर आता है। हिन्दुस्तान में मनुष्य ज्यादा और जमीन कम। यहां अगर ट्रैक्टर का उपयोग करेंगे, तो मनुष्यों को मजदूरी नहीं मिलेगी, वे बेकार बनेंगे। इसलिए ट्रैक्टर यहां मारक होगा। अमेरिका में पूरक।

विज्ञान से जीवन-परिवर्तन

विज्ञान के कारण जीवन अधिक जटिल बनेगा यह कल्पना भी भ्रामक है। विज्ञान के कारण जीवन जैसे जटिल बन सकता है वैसे सरल, ऋजु भी बन सकता है। विज्ञान की प्रगति किस दिशा में करना है, यह हमें तय करना है।

मान लीजिए, कल मनोविज्ञान कहता है कि मनुष्य को अधिक से अधिक पोषण हवा में से ही मिलना चाहिए, तो विज्ञान भी उसी दिशा में शोध करने लगेगा। और यदि हवा में से पोषण प्राप्त कर लेने का तंत्र हाथ में आ जाये, तो हमारी समूची जीवन-पद्धति में

परिवर्तन होकर उसका पूर्णरूप से कायापलट हो जायेगा। अगर रात-दिन खुले आकाश के नीचे रहना ही जीवन के लिए बहुत पोषक माना गया, तो स्वभाविक रूप से मनुष्य ज्यादा समय खेत में बितायेगा। *आज इंग्लैण्ड-अमेरिका के लोग सप्ताहांत में एक दिन खेतों पर जाकर खुली हवा का आनन्द लूटते हैं। परंतु जब विज्ञान पूर्ण विकसित हो जायेगा तो उनके ध्यान में आयेगा कि इन ऊंची मंजिलों में रहकर सारी जिन्दगी बिताना अवैज्ञानिक है। इसकी अपेक्षा खेतों पर जीवन बिताना प्रशस्त होगा। इतना ही नहीं, फिर तो बड़े-बड़े शहर टूटकर गांव ही आबाद होंगे। सभी प्रकृति-सम्पत्ति से लाभ उठायेंगे। मनुष्य को घनी बस्तियां पसंद नहीं आयेंगी।* आज केन्द्रित व्यवस्था के लिए विज्ञान का उपयोग किया जाता है, उस समय वह विकेन्द्रित व्यवस्था के लिए किया जायेगा। फिर हर घर के साथ छोटा-सा खेत रहेगा; दो घरों के बीच पर्याप्त अंतर रहेगा। फिर आज की तरह बड़ी-बड़ी मंजिलों के मकान नहीं बनेंगे। सिर्फ ठंड, धूप और बारिश से बचने के हेतु से ही मकान बनाये जायेंगे। बाकी समय तो आकाश के नीचे जायेगा।

मान लीजिए, कल यह सुविधा हो जाये कि हम हमारे घर में बैठे-बैठे दिल्ली में रहने वाले मनुष्य को प्रत्यक्ष देख सकें और बात कर सकें, तो कौन उठकर खास ट्रेन में बैठकर दिल्ली तक का लंबा प्रवास करने का कष्ट उठायेगा? फिर मनुष्य को घर बैठे ही विराट जीवन का अनुभव आयेगा। इसलिए विज्ञान के गर्भ में क्या-क्या छिपा पड़ा है, यह कौन कह सकता है?

वैज्ञानिक वृत्ति बढ़ेगी

आज विज्ञान तो बढ़ा है, लेकिन वैज्ञानिक वृत्ति निर्माण नहीं हुई है। जीवन वैज्ञानिक नहीं बना है। जीवन यदि वैज्ञानिक बनता है तो सादा होता है। विज्ञान के बढ़ने से मनुष्य आकाश का महत्त्व समझेगा। हवा का, सूर्यकिरणों का महत्त्व समझेगा। अपने स्वास्थ्य के लिए उनका उपयोग कर लेगा। इस तरह विज्ञान से आरोग्य इतना बढ़ेगा कि उत्तमोत्तम औषधियां उपलब्ध होने पर भी मनुष्य को इनकी आवश्यकता ही नहीं रह जायेगी। सब आरोग्यवान होंगे, क्योंकि मनुष्य की वृत्ति वैज्ञानिक बनी हुई होगी। डॉक्टर हैं, लेकिन उनकी जरूरत नहीं। चश्में हैं और वह ऐसे हैं कि अंधों को भी दीखने लगे। पर उसकी जरूरत नहीं होगी, क्योंकि आंखें बिगड़ती ही नहीं। हवाई जहाज होंगे, फिर भी लोग पैदल चलना पसंद करेंगे। जंगलों में घूमेंगे और आनन्द लेंगे। विज्ञान का उपयोग मनुष्य के श्रम का बोझ हलका करने में और आरोग्य बढ़ाने में होगा।

आज ज्ञान कम है, इसलिए लालसा अधिक है। यदि सूक्ष्म ज्ञान हो जाये, तो स्वास्थ्यनाशक सभी बातों पर सोचा जायेगा। ट्रेनें भी रात को बंद रहेंगी। सुबह पांच बजे चालू होंगी और रात को सात बजे बंद होंगी। आज तो रातभर ट्रेनों की धूम चलती है, जिससे स्टेशन मास्टर आदि पर अत्याचार होता है। फिर खदानों में 8-8 घंटे कौन काम करेगा? खदानों में मनुष्य से काम करवाना अमानुषिक है। मानव का स्वास्थ्य सबसे बड़ा सौभाग्य है। यह गंभीर विचार लोगों के ध्यान में आते ही स्वास्थ्यनाशक प्रवृत्तियों पर अपने-आप प्रतिबंध लग जायेगा। जब शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य का क्या संबंध है, इसका पता मनुष्य को चल जायेगा तब वह क्रोध-द्वेषादि छोड़कर निर्विकार रहने का प्रयत्न करेगा। और विज्ञान इस दिशा में उसकी मदद करेगा।

जनसंख्या

जनसंख्या आज सतत बढ़ रही है। उसके इलाज के लिए लोगों को नपुंसक बनाने की मांग है। इसलिए विज्ञान उस मांग को पूरी करने में मदद करता है। मान लें, कल मनुष्य यह मांग करता है कि एक संतान में ही हमारी तृप्ति (वासना-शमन) हो जाये और उस संतान के लालन-पालन, रक्षण तथा उसके दर्शन में ही हमारा बचा हुआ जीवन खर्च होने दें, तो विज्ञान उसको भी पूरा करने में मदद करेगा। बल्कि विज्ञान यदि हमें ऐसी तरकीब दे जिससे मनुष्य को स्पर्श से जो आनंद मिलता है, वह दर्शन से ही मिलने लगे, वस्तुतः यह मैं खुद के अनुभव से ही कह रहा हूं, लेकिन विज्ञान ने अभी तक ऐसी खोज की नहीं है। उपनिषद में एक वचन है, *न वै देवा अश्नन्ति न पिबन्ति अमृतं दृष्ट्वा तृप्यन्ति*—देव न खाते हैं, न पीते हैं, केवल दर्शन मात्र से ही उनकी तृप्ति होती है, ऐसी अवस्था यदि हो जाती है, तो मनुष्य को संतान की इच्छा रहेगी नहीं।

जीवन से विकृति हटेगी

मेरी ये बातें सुनकर लोग आश्चर्य कर सकते हैं। पर मुझे तो इसमें तनिक भी संदेह नहीं। आज जो विज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है, वह उसके मामूली ज्ञान का ही परिणाम है। अंग्रेजी में कहा ही जाता है कि, 'लिटिल नॉलेज इज डेंजरस थिंग—थोड़ा ज्ञान खतरनाक होता है। विज्ञान के प्राथमिक विकास का उपयोग होने से ही यह जोश, यह पागलपन दीखता है। लेकिन जब विज्ञान बढ़ेगा, तब सभी अच्छी बातें विज्ञान की दृष्टि से समझ में आ जायेंगी और लोग उन पर अमल करने लग जायेंगे।

किसी को आग्रह करके ज्यादा खिलाने को हम संस्कृति मानते हैं। लेकिन वह संस्कृति नहीं, विकृति है। जैसे-जैसे विज्ञान की तरक्की होगी, वैसे-वैसे विकृति क्षीण होगी और संस्कृति बढ़ेगी। आज मानव को शरीर का पूरा ज्ञान नहीं है। जब उसे शरीर का अंतर्बाह्य ज्ञान होगा, तब वह तुरंत समझ जायेगा कि आग्रह करके ज्यादा लड्डू खिलाने से पेट को कितनी हानि पहुंचती है! कल वैज्ञानिक साधनों के जरिए पेट का चित्र लिया जा सके तो समझ में आयेगा कि उस

लड्डू ने पेट को किस तरह काटा है! फिर कभी कोई ऐसा आग्रह करेगा नहीं।

पदयात्रा में लोग पड़ाव पर पहुंचने के बाद पूछते हैं कि यहां आपको किसी प्रकार की तकलीफ तो नहीं है न! इस पर *मैं कहता हूं कि गांवों में कुत्ते के भोंकने से तथा शहरों में रेडियो-लाउडस्पीकर के भोंकने से तकलीफ होती है! भगवान ने शांति के लिए रात्रि का प्रगाढ़ अंधकार पैदा किया है, जिसका स्पर्श आंखों को होते ही आराम मालूम पड़ता है। लेकिन इन दिनों लोगों ने अंधेरे को भी आग लगा दी है! शहर में जिधर देखो उधर आग लगी हुई दिखायी पड़ती है। इसे मैं संस्कृति नहीं मानता। जहां प्रकाश की जरूरत हो, वहां प्रकाश होना अच्छा है, लेकिन जरूरत के बिना ही प्रकाश बनाये रखना विकृति है।*

शास्त्रों में बताया है कि अंतकाल में संस्कार के अनुसार दूसरे जन्म में गति मिलती है। हम रात को सोते हैं, वही हमारा दैनिक अंत है। इसलिए दैनिक कार्यक्रम पूरा करके रात में भगवान का नाम लेकर सो जाने से गाढ़ी निद्रा आती है। निद्रा में विचारों का विकास होता है, वैसे ही जैसे मिट्टी से ढंके बीज का विकास जमीन के अंदर होता है। फिर सुबह उठने से सुंदर विचार, अभिनव स्फूर्ति प्राप्त होती है। लेकिन आज क्या होता है? सोने से पहले भगवान का नाम लेने के बजाय लोग देखते हैं सिनेमा! रात को बाहर खुली हवा में आकाश के चांद-सितारे-नक्षत्र देखना छोड़कर, शांत सृष्टि का वह पवित्र आनंद छोड़कर हवाबंद थियेटर में आग की पुतलियों को नाचते देखकर लोग तालियां बजाते हैं, मेरी तो समझ में नहीं आता। आकाश में कितने सुंदर दृश्य होते हैं! कभी नक्षत्रों की युति होती है। पचास-पचास साल में ऐसा योग देखने को मिलता है! इन चमकने वाले नक्षत्रों के निरीक्षण से प्रज्ञा को स्फूर्ति मिलती है। पर शहर वालों के भाग्य में सिनेमा की वजह से यह सारा सुख नहीं रहता। बुद्धि मंद होती है। *मंद बुद्धि से नये-नये शोध कैसे होंगे? हमारे देश के युवा बुद्धिमान, तेजस्वी नहीं होंगे तो देश कभी ऊपर नहीं उठेगा। उसका कारण यही है कि विज्ञान का अभी पूरा प्रचार नहीं हो पाया है। उसका आरम्भ ही हुआ है।* इसीलिए लोग उचित-अनुचित का विचार न कर जो दीखता है, उसी पर टूट पड़ते हैं। रात-रात जागकर स्वास्थ्य तक खो बैठते हैं, जिससे मन विकृत बनता है। विज्ञान की तरक्की से ही ध्यान में आयेगा कि इससे तो हम बहुत कुछ खो रहे हैं। तब मानव-मन अपने-आप को सही दिशा में अग्रसर कर सकेगा। ❑

विश्व शांति के आप रक्षक हैं

❑ **जो. कॉ. कुमारप्पा**

हमें स्मरण रखना चाहिए कि गांधीजी दैनिक जीवन में सत्य-अहिंसा के अमल पर कितना अधिक जोर देते रहे। जीवन के प्रत्येक क्षण में, प्रत्येक कामों में सत्य और अहिंसा का पालन करते हुए ही आप सर्वोदय की दिशा में आगे बढ़ सकेंगे। शोषण के नाश का तरीका है—सर्वोदय।

आपने गांव में जो कुछ किया है वह इसी के लिए कि बेहतरीन शुरुआत है। इसकी सफलता की हार्दिक जिज्ञासा रखते हुए मैं आपसे आग्रह रखूंगा कि आप अधिक से अधिक स्वावलंबी बनें। आपने जनस्वास्थ्य, यातायात (सड़क), सहयोगिता आदि पर ध्यान दिया है। इस ओर बढ़ते रहने से मुझे आशा है कि आप तभी अपने परिश्रम से इसे सच्चे स्वराज्य का गांव बना सकेंगे। आप अपने को एक कोने में पड़े हुए समझ कर अपने को पृथक न समझें। आपका यह काम अखिल भारतीय कार्य है। एक छोटे से गांव में काम करते हुए आप संपूर्ण देश की नहीं, बल्कि समस्त मानवता की सेवा कर रहे हैं। इस तरह आपका यह काम सिर्फ एक गांव तक ही सीमित नहीं रहेगा, बल्कि इन्हीं प्रयत्नों से सम्पूर्ण विश्व में सच्ची शांति लायी जा सकती है।

आज जबकि संसार भर में हिंसा की ज्वाला बढ़ती ही नजर आ रही है ओर चारों ओर से युद्ध ही युद्ध की आवाज आ रही है, तब इस वातावरण में आपके ये छोटे-मोटे प्रयत्न कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। ऐसे युद्ध की महाज्वाला में ऐसे ही प्रयत्न उन ज्वालाओं को रोक सकते हैं। जैसा कि गांधीजी ने कहा—रचनात्मक कामों के द्वारा ही विश्व को विनाश से बचाया जा सकता है। आज हम शांति के लिए यू. एन. ओ. की ओर देखते हैं। लेकिन उसका व्यवहार तो प्रत्यक्षतः विनाश की ओर ले जाने वाला होता है। ऐसी स्थिति में उससे शांति की उम्मीद करना व्यर्थ है। शांति तो गांवों में इन रचनात्मक कार्यों द्वारा प्रयत्न करने से ही हो सकती है। गांव के कार्य युद्ध की जड़ खोदने वाले हैं। इसलिए आप अपने कार्य को विश्व कार्य का एक अंग समझें। आपका काम रचनात्मक है, मानवता के लिए जीवन-दायक है। आप अपनी शक्ति का अनुभव करें और नव-निर्माण की ओर बढ़ें। आपको नेताओं की फिक्र नहीं करनी चाहिए। आपको अपने आपको नेता समझकर अपना कार्य करना चाहिए।

बड़े-बड़े नेता ही तो भयावह कलह की परिस्थिति पैदा करने वाले होते हैं। स्टालिन और ट्रूमैन आज शांति नहीं, युद्ध की आग भड़का रहे हैं। शांति आपके इन छोटे-मोटे कार्यों के द्वारा ही लायी जा सकती है। इन रचनात्मक कार्यों के द्वारा एक क्रांति का आपको नव-निर्माण करना है और इस तरह विश्व की रक्षा का भार आप अपने छोटे-मोटे कार्यों द्वारा निभा सकते हैं।

(सर्वोदय शिक्षण शिविर, तुलसिया)

दस्तावेज : एक

...गतांक से आगे

जलते चिराग हैं विनोबा

❑ काका कालेलकर

आत्मनि प्रत्यय

एक यूरोपियन या अमेरिकन दल भारत की यात्रा के लिए आया था। ये लोग अक्सर शीतकाल में भारत-भ्रमण करते हैं। किसी शहर में घूमते-घूमते उन्होंने रास्ते पर बड़े-बड़े सफेद लड्डू देखे। लड्डू भुने हुए राजगिरा की खील या लावा के थे। बड़े-बड़े सफेद लड्डू देखकर उनका मन ललचाया। उन्होंने खाकर देखा। अच्छे लगे। चार लड्डू उन्होंने ले भी लिये और दाम पूछे। बेचने वाली भोली औरत ने कहा : ''एक आने के दो।'' इतनी सस्ती कीमत सुनते ही खरीदने वाला दल चिन्तित हो गया। अपनी अभिरुचि पर उनका विश्वास नहीं था। इतनी सस्ती चीज खराब ही हो सकती है, लेने में हमने भूल की, ऐसा निश्चय करके लड्डू और पैसे वहीं छोड़कर वे चले गये। दूसरे लोग भी लड्डू लेकर खाते थे। लेकिन वे गरीब लोग थे। इन परदेशी लोगों को न गरीब लोगों के अभिप्राय पर विश्वास था, न अपनी स्वादेन्द्रिय पर। *जो चीज बाजार में महँगी नहीं है, वह अच्छी नहीं हो सकती, यही था उनका दंडक या मानसूत्र।*

किसी आदमी ने एक प्राचीन प्रख्यात चित्रकार का चित्र खरीदा। बड़ा ही कलात्मक था वह चित्र। उसने पांच-दस कला-कोविदों को वह चित्र दिखाया। सब लोगों ने उसे पसंद किया और कहा कि ''सचमुच यह राफेल का ही चित्र है। उसके बिना इतना अच्छा चित्र दूसरा कोई बना ही नहीं सकता। कितने आत्मविश्वास वाले हाथ ने यह चित्र खींचा है!'' बाद में पता चला कि वह चित्र राफेल का तो है नहीं, लेकिन राफेल के किसी मशहूर चित्र की प्रतिकृति भी नहीं है। खरीदने वाले को दर्द हुआ कि वह धोखे में आ गया और उसका दाम बरबाद हुआ। (कलाकृति के दाम हीरा, माणिक, मोती से भी बढ़कर होते हैं, अगर वह कलाकृति मौलिक हो तो।) यह चित्र मौलिक था, खरीदने वाले को पसंद आया था। कला-कोविदों ने भी उसकी भूमि-भूरि प्रशंसा की थी। इतने अच्छे चित्र के लिए दिये हुए दाम सचमुच योग्य भी थे।

लेकिन चित्र के साथ बड़े नाम का संबंध गलत साबित हुआ, इसीलिए खरीदने वाले के मन में उसकी कीमत शून्य हो गयी।

दुनिया ऐसी ही चलती है। किस चीज को अच्छा कहना, किस चीज को बुरा कहना इसकी कसौटी, दुनिया के पास—मामूली दुनिया के पास नहीं होती। नैतिक मूल्यों में भी बाजार-भाव ही प्रमाणित माना जाता है। इसी लोक-स्वभाव को देखकर किसी ने कहा : **'गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः।'**

मैं ऐसे लोगों को जानता हूं, जिन्होंने कहा था : ''आपके विनोबा में क्या है? बड़े घमण्डी हैं। अपने को दुनिया से न्यारा मानते हैं। बड़े लोगों का अपमान करके ही अपने को बड़ा बनाते हैं। थोड़ा संस्कृत जानते हैं, खादी का काम करते हैं और गांव की टट्टियां साफ करते हैं। अपने आश्रम के लोगों को अमिश्र भोजन खिलाते हैं और अलसी के गंदे तेल की तारीफ करते हैं। अनपढ़ ग्रामसेवक उनके संस्कृत पाण्डित्य से प्रभावित होते हैं और पण्डित लोग उनकी तपस्या को देखकर दब जाते हैं। पण्डितों का संस्कृत-ज्ञान कई गुना अधिक होता है और ग्रामसेवकों की तपस्या भी विनोबा से दसगुनी अधिक होती है। तपस्वी होते हुए भी विद्वान और विद्वान होते हुए भी तपस्वी ऐसे प्राणी देखने को कम मिलते हैं, यही है तुम्हारे विनोबा की महत्ता। उनकी आंखें तो देखो कितनी भूखी होती हैं।''

अनेक लोगों के मुंह से सुने हुए अनेक उद्‌गार इकट्ठा करके ऊपर दिये हैं। मुझे यह देखकर खुशी होती है कि ये ही लोग आज विनोबा की तारीफ करते थकते नहीं और अभिमान रखते हैं कि वे विनोबा की महत्ता कब से पहचानते आये हैं। अपना पुराना अभिप्राय वे आराम से भूल गये हैं।

मैंने एक दफा विनोबा से कहा था : ''विनोबा, आप लोगों से जरा सँभलकर पेश क्यों नहीं आते? आपके बारे में लोगों के मन में नाहक ही गलतफहमियां पैदा होती हैं।''

विनोबा ने अपने ढंग से जवाब दिया : ''लोगों के मन में गलतफहमियां पैदा होती हैं, उसकी मुझे परवाह नहीं है। मेरे मन में लोगों के बारे में तनिक भी गलतफहमी नहीं है, इतना मेरे लिए बस है।''

मैं लोगों से कहता हूं कि विनोबा आज बड़े नहीं बने हैं, पहले से थे। आज लोगों ने उनका चमत्कार देखा। इसलिए लोगों के मन में विनोबा आज बड़े बन गये। सच तो यह है कि वे न तो आज बड़े बने हैं, न लोगों ने उनको बड़ा बनाया है। चमत्कार तो इस बात का है कि हजारों लोग विनोबा की बात मानने को तैयार हुए और जो काम बड़े हृदय के लोग ही कर सकते हैं, वही काम मामूली-से-मामूली लोग भी विनोबा की प्रेरणा से आज करने को तैयार हुए हैं। दो-चार व्यक्ति नहीं, हजारों लोग अपना रोजमर्रा का दुनियावी बाजारू आदर्श छोड़कर ऊँचे उठने को तैयार हैं और जिसे लोकोत्तर कहा जाता था, ऐसा काम मामूली लोग भी उत्साह से करने लगे हैं।

लोग पूछते हैं कि क्या जिस तरह विनोबाजी को भूमि मिलती गयी है, गांव-के-गांव मिलते जाते हैं, उसी तरह आगे बढ़ते-बढ़ते हिन्दुस्तान के सबके सब गांव और शहर ग्रामदानी बन जायेंगे? मैं उन्हें कहता हूं कि *भगवान की दुनिया में अशक्य-सा कुछ नहीं है। लेकिन हरएक चीज के विकास की अपनी मर्यादा होती है। सिर के और दाढ़ी के बाल बढ़ते जाते हैं। लेकिन अपनी मर्यादा पहचानकर वे रुक जाते हैं। हाथ पर के बाल सिर के बाल जैसे लम्बे नहीं होते। यह सही है*

कि मनुष्य के विकास के लिए कोई मर्यादा नहीं है, लेकिन हरएक जमाने के लिए अपनी मर्यादा होती है। इसलिए विकास का क्रम गुणाकार के नियमों से तय नहीं होता। इसमें अनुपात का नियम भी काम का नहीं।

एक छोटे बच्चे ने बिना किसी की मदद से खड़े रहने की सौ दफे कोशिश की। नब्बे दफे वह नाकामयाब हुआ। दस दफे कुछ क्षण के लिए वह खड़ा हो सका। इस पर से आप कह सकते हैं कि जो बच्चा फीसदी नब्बे दफे नाकामयाब हुआ, वह कभी भी खड़ा नहीं हो सकता? नब्बे फीसदी अपयश ही उसकी तकदीर में लिखा हुआ है। अनुपात का यह अनुमान व्यवहार में सही नहीं होता। बचपन में बच्चे जितनी तेजी से ऊंचे हाते हैं और वजन में बढ़ते हैं, उसका अनुपात निकालकर अगर हम हिसाब करेंगे तो आदमी सौ फुट ऊंचा बनेगा और उसका वजन भी हजार रतल का होगा। लेकिन ऐसा नहीं होता। ऊंचाई की और वजन की अपनी मर्यादा होती है।

लेकिन यह मर्यादा हरएक वंश के लिए एक-सी नहीं होती। अफ्रीका में छोटे-छोटे पिग्मी (वालखिल्य) लोग होते हैं। उनकी ऊंचाई और रशिया के कोझाक लोगों की ऊंचाई में बड़ा ही फर्क होता है।

प्रयत्न करने से प्रजा अपनी ऊंचाई बदल सकती है। जापान की प्रजा ने विशेष प्रकार की कसरत और मेहनत करके अपनी राष्ट्रीय ऊंचाई चार-छह इंच जितनी बढ़ायी है। विनोबाजी का भूदान-ग्रामदान का आंदोलन जोरों से चले, लेकिन उसकी भी मर्यादा होगी।

फिर देखते-देखते दूसरा जमाना आयेगा, जिसमें आज की मर्यादा लांघकर लोग और भी ऊंचे उठेंगे। कालबल और मनुष्य-प्रयत्न दोनों में परिवर्तन होता ही रहता है। विनोबा के मन में लोगों के प्रति, लोगों के हृदय-शक्ति के प्रति श्रद्धा और आस्तिकता जाग उठी। उन्होंने लोगों से कहा कि इतना त्याग तो तुम कर सकते हो। लोगों ने माना। उनका आत्मविश्वास जागृत किया। लोगों ने करके दिखाया। और आज चकित दुनिया मान सकती है कि यह सब हो सकता है।

विनोबा की शक्ति और सफलता की बुनियाद में एक बात विशेष है। वे गतानुगतिक नहीं हैं। दस लोग मानते हैं, इसलिए मानना यह उनके स्वभाव में नहीं है। दस लोगों ने कोई चीज छोड़ दी, इसलिए उसे निःसार, सार-रहित समझना यह भी विनोबा से नहीं होगा। वे अपने निजी अनुभव और श्रद्धा से चलेंगे। कोई चीज जँच गयी कि वह अच्छी है, तो वह उनके लिए अच्छी है। फिर वे उसे इसलिए छोड़ेंगे नहीं कि लोग उसकी कदर नहीं करते। **'महाजनो येन गतः स पन्थाः।'** इस वचन का लोगों ने अर्थ किया है कि *बहुत-से लोग जिस रास्ते जाते हैं, जिस आदर्श को मानते हैं, उसी को मान लो। सामान्य लोगों का यह नीति-शास्त्र है। विनोबा उनमें से नहीं हैं। बचपन से वे अपना निजी अनुभव खरीदते आये हैं। मन में आया कि एक चीज अच्छी है तो तुरन्त उसे आजमाकर देखा। अनुभव लिया और आगे बढ़े।*

यही कारण है कि विनोबा दिन-पर-दिन सौम्य भी बनते जाते हैं और उनका प्रभाव भी बढ़ता जा रहा है। लड्डू सस्ता दीख पड़ा, इसलिए फेंक दिया ऐसा स्वभाव उनका नहीं है।

('विनोबा और सर्वोदय क्रांति' से साभार)

शांति सद्भावना साइकिल यात्रा का शुभारम्भ

सर्व सेवा संघ व अन्य 23 राष्ट्रीय गांधी-विचार व समविचारी संस्थाओं के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित 'शांति सद्भावना साइकिल यात्रा' का शुभारम्भ वरिष्ठ गांधीवादी व सर्व सेवा संघ के मंत्री चंदन पाल के नेतृत्व में 3 सितंबर, 2016 को 9.30 बजे हिंसाग्रस्त कोकराझार (असम) से हुआ।

यात्रा का उद्घाटन कार्यक्रम वोडो लैण्ड गेस्ट हाउस के सामने सम्पन्न हुआ। उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि वीटीसी के प्रमुख काम्पा बारगेयरी रहे। इनके अतिरिक्त सत्र में विशेष रूप से वरिष्ठ गांधीवादी एवं लक्ष्मी आश्रम, कौसानी की अध्यक्ष राधाबहन भट्ट, टूरिज्म डिपार्टमेंट, कोकराझार के डायरेक्टर मोहन ब्रह्म, आल वीटीएडी गांवगुड़ा एसोशिएन के अध्यक्ष धनंजय ब्रह्म, सर्वोदय समाज के संयोजक आदित्य पटनायक, राजस्थान सर्वोदय मंडल की अध्यक्ष आशा बहन बोथरा सहित स्थानीय प्रबुद्ध नागरिक उपस्थित रहे।

शांति सद्भावना साइकिल यात्रा के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए चंदन पाल ने कहा कि जो भाई-बहन यात्रा में जा रहे हैं, वे 'शांतिदूत' हैं। पिछले चार सालों से हमलोगों ने कोकराझार में जो शांति-कार्य किया, उससे प्रभावित होकर ये साथी तैयार हुए हैं। यह यात्रा कश्मीर तक जायेगी। कश्मीर में हिंसा भड़की हुई है। ऐसे समय में वहां पहले कदम के तौर पर मुख्य रूप से जिन मुद्दों पर काम करने की अत्यंत आवश्यकता है— उसमें, सर्वप्रथम स्थानीय लोगों के दुख-दर्द को बांटना होगा। सभी के साथ वार्तालाप कर उनके मन को अहिंसक एवं सद्भावनापूर्ण बनाने का प्रयास करना होगा।

उन्होंने आगे कहा कि आज पर्यावरण नष्ट हो रहा है और मनुष्य को लगातार चेतावनी भी दे रहा है। जल, जंगल, जमीन व खनिज को निर्ममतापूर्वक लूटा जा रहा है। इसलिए जरूरत है पर्यावरण को क्षति पहुंचाने वालों को अविलम्ब रोका जाय। हमलोगों को पर्यावरण की रक्षा के लिए लोगों को जागरूक करना पड़ेगा। इसी प्रकार नशा चाहे वह कोई भी मादक पदार्थ का हो, वह समाज में कुविचार, हिंसा, गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा आदि को बढ़ावा देता है। इसके खिलाफ जन-जागरण का काम भी हम सभी को करना है। इन मुद्दों के साथ, समाज में शांति एवं सद्भाव कायम रहे, यही इस यात्रा का उद्देश्य है।

जन-जागरण की दृष्टि से यह यात्रा आसपास के स्कूलों में सम्पर्क कर संवाद कार्यक्रम आयोजित करते हुए आगे बढ़ रही है। युवकों को गांधी-विचार से जोड़ने के लिए गांधी, विनोबा, लोकनायक जयप्रकाश नारायण सहित देश के अन्य महापुरुषों के विचारों की पुस्तकों की प्रदर्शनी भी लगायी जा रही है।

शांति सद्भावना साइकिल यात्रा में नेतृत्व कर रहे चंदन पाल के साथ 20 लोग सहभाग कर रहे हैं, जिसमें वोडो, मुस्लिम, हिन्दू, राजवंशी, क्रिश्चियन, बंगाली, त्रिपुरी, मराठी आदि सभी धर्मों के हैं, जो 'सर्वधर्म समभाव' के प्रतीक हैं। **–स. ज. प्रतिनिधि**

दस्तावेज : दो

...गतांक से आगे

विनोबा का पुरुषार्थ भूदान

भूदान : सामाजिक क्रांति व समाज के नव-निर्माण का पहला कदम

❑ जयप्रकाश नारायण

ग्रामदान के चार आयाम : जब तक गांव में कोई मानसिक परिवर्तन नहीं होगा, सामाजिक परिवर्तन नहीं होगा! पारस्परिक संबंधों में कोई फर्क नहीं पड़ेगा, तब तक कोई उन्नति नहीं होगी। इसलिए ग्रामदान में मुख्य रूप से इन परिवर्तनों पर जोर दिया जाता है। सबसे पहले तो हम ग्रामदान द्वारा लोगों के मानस में ऐसा परिवर्तन लाना चाहते हैं कि भूमि का मालिक भगवान है, इसलिए भूमि का व्यक्तिगत स्वामित्व नहीं रहना चाहिए। भूमि का पूरा स्वामित्व ग्रामसभा यानी ग्राम-समाज को समर्पित करना है। फिर भी भूमि पर खेती करने, उत्पादन का उपभोग करने और विरासत में देने का हक भूमिवान् के पास ही रहेगा, पर ग्रामसभा की मंजूरी के बिना वह बेची नहीं जा सकती। जमीन ग्रामसभा के नाम हो जाती है और सरकारी खाते में पूरे गांव का एक खाता हो जाता है तो इससे लोगों के मानस में परिवर्तन होता है ओर साथ-साथ सरकार के राजस्व-विभाग का काम भी बहुत सरल हो जाता है।

दूसरी बात यह है कि भूमिवान् को अपनी जमीन का बीसवां हिस्सा भूमिहीनों के लिए दान देना है। आज प्रत्येक व्यक्ति गांव में चाहे जैसे भी अधिक से अधिक जमीन हड़प लेने के चक्कर में पड़ा है। इसकी हड़प लें—उसकी हड़प लें, इसे पचा लें—उसे पचा लें, स्कूल की जमीन, श्मशान की जमीन, गांव की परती जमीन में से कुछ हड़प लें। इन सबके बजाय एक नया ही कदम होगा, कुछ देने का। गरीब को भी लगेगा कि इन लोगों ने हमारे लिए कुछ किया है। इससे गांव में पारस्परिक संबंध भी कुछ सुधरेंगे।

तीसरी बात यह है कि प्रत्येक आदमी अपने खेत में जो कुछ पैदा करेगा, अथवा नकद कमाई करेगा, उसका 40वां हिस्सा ग्रामकोष में देगा। किसानों को छोड़कर दूसरे लोग अपनी मासिक कमाई में से एक दिन की कमाई देंगे। श्रमजीवी महीने में एक दिन का श्रमदान करेंगे। इस तरह बांटने की, छोड़ने की, त्याग की प्रक्रिया सतत चलती रहेगी। (त्याग में गरीब भी हिस्सेदार होगा। 'मैं समाज के लिए कुछ नहीं कर सकता', इस हीनभावना से वह मुक्ता होगा—सं.) इस तरह जो ग्रामकोष खड़ा होगा, उससे गांव में उद्योग-धंधे खड़े हो सकेंगे और जरूरतमंदों की सहायता की जा सकेगी। गांव वाले धीरे-धीरे महाजनों के कर्ज से भी छुटकारा पा सकेंगे।

चौथी बात यह है कि गांव की ग्रामसभा बनेगी, जो पूरे गांव के हित को ध्यान में रखते हुए सर्वानुमति से काम करेगी।

ग्राम-स्वराज्य के चार पाये : *ये चारों बातें ग्राम-स्वराज्य के चार पाये हैं। इस प्रकार ग्रामदान द्वारा जमीन का सामाजिक स्वामित्व कायम होता है, ग्राम-समाज में बैठकर जीने की आदत पड़ती है, ग्रामकोष के जरिये गांव में पूंजी का निर्माण होता है और गांव का कामकाज सर्वानुमति से चलना आरम्भ होता है। भूमि-व्यवस्था ग्रामसभा के हाथ में आती है। इस तरह सरकारी विभाग के हस्तक्षेप से गांव मुक्त बनता है। ग्रामसभा नशाबन्दी का प्रस्ताव कर सकती है। और उसके अमल के लिए भी व्यवस्था कर सकती है। ग्रामसभा यह प्रयत्न भी कर सकती है कि गांव का कोई भी झगड़ा अब कचहरी में नहीं जायेगा। ग्रामसभा साहूकारों को अधिक ब्याज लेने से रोक सकती है। इस प्रकार ग्रामसमाज की समस्याएं ग्राम-समाज के स्तर पर ही हल करने की एक भूमिका ग्रामदान द्वारा तैयार होती है। गांव में एक नयी चेतना, नयी भावना जगती है।*

भारत का हजारों वर्षों का एक इतिहास है। यहां अनेक साम्राज्य बने और उनका पतन भी हुआ। फिर भी भारत जीवित रहा। इसका क्या कारण है? एक इतिहासकार ने लिखा है कि *जैसे आंधी में भीमकाय वृक्ष भी उखड़ जाते हैं किन्तु क्षीणकाय घास अपनी जगह बनी रहती है, उसी तरह यहां साम्राज्य बदलते और टूटते रहे, किन्तु गांवों में जो ग्रामराज्य कायम थे, वे जीवित रहे और इसी से भारत जीवित रहा। अंग्रेजी शासन आया तब ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जान-बूझकर ग्रामराज्य संस्था तोड़ दी, क्योंकि वही हमारे समाज को बांधने वाली शक्ति थी और वह कायम रहती तो उनकी (अंग्रेजों की) जड़ें इस देश में बहुत गहराई तक नहीं जा सकती थीं। इसलिए उन्होंने गांव के संगठन को तोड़ा। इस तरह हमारे समाज का अंग्रेजों ने 'ऐटॅमाइजेशन'—विघटीकरण कर दिया।* इसके कारण गांवों की दुर्दशा हुई। इन गांवों को उठाने के लिए फिर से उनका संगठन खड़ा करना होगा और ग्रामदान द्वारा यही काम करना है।

ग्रामदान से गांव की शक्ति पनपती है : उदाहरण के लिए मंगरोठ की बात लें। मंगरोठ हमारे देश का पहला ग्रामदान है। जब ग्रामदान हुआ, तब गांव के

लोगों ने कहा कि अब हमारा गांव एक परिवार बन गया इसलिए पूरे गांव की मालगुजारी ग्रामसभा चुका देगी, फिर वह गांव वालों से हिसाब कर लेगी। किन्तु गांव के पटवारी ने कहा कि वह ग्रामदान को नहीं मानता। तो गांव वाले इकट्ठे होकर पूरे गांव की मालगुजारी देने गये। तब राजस्व-अधिकारी ने कहा कि मुझे इस तरह मालगुजारी लेने का कोई अधिकार नहीं है। पण्डित गोविन्दवल्लभ पंत उस समय उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री थे। बात उन तक पहुंची। वे दूरदर्शी थे। समझ गये कि इतनी अच्छी बात को इनकार करेंगे, तो सरकार की कितनी बदनामी होगी। उन्होंने तुरंत आदेश दिया कि पूरे गांव की इकट्ठी मालगुजारी ले ली जाय।

तो, यह लोकशक्ति को सही दिशा में अगर मोड़ा जा सकता है, तो जनता की संगठित शक्ति द्वारा ही। और ऐसी लोकशक्ति जिसके द्वारा निर्मित हो सकती है, वही क्रांतिकारी कार्यक्रम है।

लोकशक्ति कैसे जागे? : जनता की शक्ति ग्रामदान जैसे रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा ही सुदृढ़ हो सकती है। लोकसभा के समक्ष एक लाख की भीड़ इकट्ठी कर देने से ऐसी लोकशक्ति नहीं पैदा हो सकती। यह भी लोकशक्ति का एक स्वरूप है, किन्तु लोकशक्ति द्वारा निर्माण का विधायक काम करना हो, सच्चे अर्थ में जिम्मेदार लोकशक्ति जगानी हो, तो वह ग्रामदान जैसे बुनियादी कार्यक्रम द्वारा ही हो सकेगा।

और, ऐसी शक्ति जगाये बिना कोई चारा नहीं। स्वराज्य का हमारा अनुभव यह कहता है कि केवल राज्य द्वारा कोई काम पूरा नहीं होता। मुख्य जिम्मेदारी तो जनता को ही उठानी है। इतनी पंचवर्षीय योजनाओं के अनुभव से हमने देखा कि लोक-जागृति और लोक-संगठन के बिना निर्माण-कार्यों और विकास-योजनाओं के पीछे करोड़ों रुपये खर्च करने के बावजूद कुछ नहीं हुआ। जब तक जनता का अभिक्रम नहीं जगता, तब तक इन कार्यों में प्राण नहीं आ सकता।

राज्यशक्ति या लोकशक्ति : सरकार के पास बहुत अधिक धन है और उस धन से वह बड़े-बड़े काम कर सकने में समर्थ है, ऐसा मनना भी एक भ्रम है। सरकार के पास जो शक्ति है, वह जनता की शक्ति की तुलना में बहुत कम है। एक उदाहरण दूँ। मैं बिहार के मुसहरी-प्रखण्ड में काम कर रहा था। वहां मैंने देखा कि चालू वर्ष (सन् 1971-1972) में उस प्रखण्ड के लिए सरकार की तरफ से मात्र रुपये 15 हजार ही आवंटित किये गये। किन्तु ग्रामदान के कार्यक्रमानुसार यदि प्रत्येक गांव अपनी पैदावार का 40वां हिस्सा ग्रामकोष में जमा करे और इस प्रकार यदि एक गांव में एक हजार रुपये भी एकत्र हों (हालांकि फसल का चालीसवां हिस्सा, यानी मन पीछे केवल एक सेर ग्रामकोष में जमा करने से एक हजार रुपये से अधिक ही एकत्र होगा।—सं.) तो पूरे प्रखण्ड में 121 गांव होने के कारण (एक वर्ष में ही) कुल 1 लाख 21 हजार रुपये इनके हाथ आ सकते हैं। *इसके अलावा भूमिहीन मजदूरों के श्रमदान से ग्राम-निर्माण के लिए हजारों मनुष्य-दिन प्राप्त हो सकते हैं। यानी कि एक प्रखंड के विकास के लिए जहां राज्य-शक्ति जब मात्र 15 हजार रुपये ही खर्च कर सकती है, वहां लोक-शक्ति सवा लाख रुपये खर्च कर सकती है। ग्रामदान के जरिये गांव की बिखरी हुई साधन-शक्ति कैसे इकट्ठी की जा सकती है, इस बात का कुछ खयाल इससे आयेगा।*

लोक-कल्याणकारी, राज्य का नाम लेना तो आजकल एक फैशन हो गया है। लेकिन वह अयेगा कितने वर्षों में (और आयेगा भी या नहीं) वह तो भगवान ही जाने। जबकि ग्रामदानी गांव में तो आज से ही लोक-कल्याणकारी राज्य का आरम्भ हो सकता है। गांव में कोई भूखा न रहे, नंगा न रहे, बेकार न रहे, इसके लिए पूरा गांव विचार करने लगे और सामूहिक प्रयत्न शुरू कर दे तो गांव में कल्याणकारी ग्रामराज्य की शुरुआत हो जाय। यह सब गांव-गांव में लोकशक्ति जगाये बिना सम्भव नहीं है।

किन्तु आज हमारे देश में लोकशक्ति का नितान्त अभाव है। मिल-जुलकर काम करने की मनोवृत्ति नहीं है। यदि पांच आदमी कोई काम करते होंगे, तो उसे बिगाड़ने के लिए दूसरे पांच तैयार हो जाते हैं। जब तक इस मनोवृत्ति को नहीं छोड़ेंगे और मिल-जुलकर अपना काम स्वयं करने की शक्ति नहीं खड़ी करेंगे, तब तक दिल्ली की गद्दी पर आप चाहे जिसे बैठा दें, तो भी देश आगे नहीं बढ़ सकेगा। ग्रामदान द्वारा जनता का अभिक्रम पैदा होता है, गांव में एक संगठन बनता है, ग्राम भावना जगती है। इससे गांव के निर्माण के लिए, ग्राम स्वराज्य की स्थापना के लिए एक शक्ति प्रकट होती है। यह बहुत बड़ी बात है। इसके बिना साढ़े पांच लाख गांवों का उत्थान कैसे हो सकता है?

नैतिक उत्थान : स्वराज्य की लड़ाई में हमें त्याग की दीक्षा मिली थी। किन्तु स्वराज्य मिल जाने के बाद हम उसे भूल गये और भोग के पीछे पड़ गये। *बस, लेना ही लेना है, जितना मिल सके उतना लाभ लेना है, देना कुछ नहीं है, ऐसा एक मानस देश में बन गया है। इस मानस को, इस विपरीत प्रवाह को बदलना पड़ेगा। कुछ देना शुरू करें। त्याग की शक्ति की महिमा तो वेदकाल से गायी जाती रही है। किन्तु यहां तो त्याग की बात को एक स्थूल कार्यक्रम बनाकर ग्रामदान के रूप में विनोबाजी ने हमारे समक्ष रखा है : मालिकी छोड़ने की बात, भूमि का बीसवां भाग देने की बात, वर्ष में उपज का चालीसवां भाग देने की बात! इससे देने वाले के मानस में कुछ परिवर्तन होगा। लेने की जगह देने की बात! गीता, रामायण, कुरान, बाइबिल आदि को आचरण में उतारने का एक स्थूल कार्यक्रम!*

हमारे देश में बड़े-से-बड़े चिन्तकों का भी सबसे बड़ा दोष यह रहा है कि उन्होंने महान् विचार तो रखे, किन्तु उसे व्यवहार में लाने का मार्ग नहीं बताया। महापुरुषों ने सारी बातें कही ही हैं, फिर भी आज समाज की

कैसी हालत है? *कौन बुद्ध के रास्ते चल रहा है? कौन ईसा के बताये रास्ते चल रहा है? कौन मोहम्मद के मार्ग पर चल रहा है? यानी ये सब केवल बातें ही बातें रह जाती हैं। अतः इन सब बातों को हमें अपने जीवन में, अपने पड़ोसी के जीवन में, गांव के जीवन में दाखिल करना होगा। इसके लिए ही यह ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का कार्यक्रम है, यह एक नैतिक उत्थान का बहुत बड़ा व्यापक और गहरा कार्यक्रम है। ''जो वस्तु बहुत प्यारी है—मालिकी, उसे छोड़ना। जो भूमि प्यारी है, उसका कुछ भाग छोड़ना। मेहनत से जो पैदा किया जाता है, उसमें से नियमित देते रहना।'' ये कुछ छोटी बातें नहीं हैं। इनसे जो शक्ति पैदा होती है, वह शक्ति नया समाज-निर्माण कर सकती है।* एक अच्छा समाज बनाने की अनुकूलता गांव में पैदा होती है।

रोग की जड़ में जाना पड़ेगा : देश में अनेक प्रश्न हैं, अनेक तरह की समस्याएं हैं। हजार जगह हजार तरह की परिस्थितियां हैं। उससे क्या कोई शक्ति पैदा होगी? अनेक प्रकार की समस्याएं हैं, उनके मूल में जाना होगा। रोग के भिन्न-भिन्न लक्षण दीखते हैं, उसे लेकर कब तक इलाज करते रहेंगे? मूल रोग को ही समझना चाहिए। और मूल में जाकर इलाज करना चाहिए। रोग का जड़मूल से नाश करने का प्रयत्न करना चाहिए।

इसलिए बुनियाद से ही ग्रामदान जैसा कोई रचनात्मक कार्यक्रम शुरू करना पड़ेगा। जनता को यह समझना पड़ेगा कि वास्तव में देश की समस्याओं का हल आपके और मेरे हाथ में है। कोई दूसरा आकर हमारा उद्धार नहीं कर सकेगा। लोगों में आत्मविश्वास पैदा करना होगा, उन्हें अपने कार्य अपने पूरे करने के अवसर और साधन उपलब्ध कराने होंगे। उन्हें अपने गांव की व्यवस्था सम्भालने के लिए तैयार कर लोकतंत्र की नींव मजबूत करनी होगी। इसके लिए बहुत से उपयुक्त कार्यक्रम चलाने पड़ेंगे, किन्तु उनके साथ-साथ ऐसा भी कोई कार्यक्रम चलाना पड़ेगा, जो लोक-आंदोलन का स्वरूप ले सके। ऐसा होगा, तभी देशभर में उसका प्रभाव पड़ेगा, देश के आयोजन पर प्रभाव पड़ेगा, गांवों में बसी 80 प्रतिशत जनता की आवाज सुनायी पड़ेगी। आज तो आयोजन के संबंध में या दूसरी बातों के संबंध में कुछ भी कहें, उसका ज्यादा असर नहीं पड़ता, क्योंकि हमारे शब्दों के पीछे कोई लोकशक्ति नहीं है। लोक-आंदालन खड़ा हो, तो लोकशक्ति जगे और फिर आयोजकों के साथ, अर्थशास्त्रियों के साथ और सरकार के साथ देश के लाखों गांवों की तरफ से बात की जाय।

हमारे सौभाग्य से देश में ग्रामदान का यह आंदोलन चला। उसमें से एक शक्ति प्रकट हुई, एक आशा बनी। लेकिन अभी तो बहुत ही कम ताकत इस आंदोलन के पीछे लगी है। चुनाव के समय जैसे लोग गाड़ी, घोड़ा और जीप लेकर निकल पड़ते हैं, लोगों के कान फट जायं ऐसा जोरदार प्रचार रात-दिन करते हैं, करोड़ों रुपये पानी की तरह खर्च होते हैं और सब लोग आकाश-पाताल एक कर देते हैं, इस तरह की संगठित ताकत यदि इस आंदोलन के पीछे लगी होती, तो आज की अपेक्षा बहुत अच्छा परिणाम आया होता।

व्यापक लोकसम्मति प्राप्त हुई है : फिर भी, अब तक इस आंदोलन का जो परिणाम आया है, वह भी कम आशाजनक नहीं है। गांधीजी के अहिंसक मार्ग से सर्वोदयी समाज रचना की बुनियाद डालने का यह काम है। यद्यपि अभी बहुत कुछ करना है। यह तो मात्र पहला चरण है। ग्रामदान अभी कागजों में है। उसे धरती पर उतारना है।

लेकिन यों देखें तो लोकसभा और विधानसभा में जो कुछ होता है, वह पहले तो कागज पर ही होता है न! कानून बनते हैं, वे भी कागज पर ही न! 25 वर्षों में कितने कानून बने होंगे? उनमें से मात्र 10 प्रतिशत मुश्किल से व्यवहार में आये होंगे। विनोबा ने ठीक ही कहा था कि आखिर चुनाव में क्या करते हैं? कागज का टुकड़ा मतपेटी में ही डालते हैं न? किन्तु उस कागज में इतनी ताकत है कि हुकूमतें बदल जाती हैं।

यह समझने की बात है कि वास्तव में इस आंदोलन का उद्देश्य कुछ छिटपुट 'आदर्श गांव' बनाना नहीं, समाज-परिवर्तन के लिए सर्व-सामान्य लोकमानस तैयार करना ही है। दस-बीस-पचास गांवों के नमूने बनाकर रखें और चारों तरफ का समाज जैसे-का-तैसा ही रहे, तो ये नमूने समुद्र के बीच के टापुओं की तरह गर्क हो जायेंगे। नमूने बनाकर दिखाने से क्रांति हो सकेगी, यह एक बहुत बड़ा भ्रम है।

परिवर्तन में विश्वास रखने वालों के सामने चुनौती : भूदान और ग्रामदान के बाद आज इस आंदोलन का तीसरा चरण है, ग्रामस्वराज्य! अब तक जितना काम हुआ है, उस हिसाब से अभी जो करना शेष है, वह समुद्र जैसा विशाल है। यह काम मात्र मुट्ठीभर सर्वोदय-कार्यकर्ता नहीं कर सकते और सरकारी एजेन्सियों और कर्मचारियों से भी यह हरगिज नहीं होने वाला है। हां, इन सबसे हमें मदद मिलेगी, लेकिन मुख्य जिम्मेदारी ग्रामीण समुदायों को स्वयं ही उठानी होगी। सर्वोदय की सामुदायिक राज्य-व्यवस्था (कम्यूनिटेरियन पालिटी)—लोकनीति—के एक-एक स्तर का, बुनियाद से शुरू कर शीर्ष तक, निर्माण करना होगा। यह हमारे सामने प्रमुख चुनौती है। केवल सर्वोदय वालों के सामने नहीं, बल्कि सच पूछा जाय तो जो भी शांतिमय समाज-परिवर्तन और विकास में विश्वास रखते हैं, उन सबके सामने यह एक खरी चुनौती है। एक भगीरथ काम है, किन्तु उसे बिना किये आज की अनेकविध समस्याओं का दूसरा को हल भी नहीं है।

इस आंदोलन का मेरा जो अनुभव है, उसके आधार पर मैं दृढ़तापूर्वक कह सकता हूं कि जिस श्रद्धा से मैं इस आंदोलन में आया, वह श्रद्धा दिन-प्रतिदिन दृढ़ होती जा रही है। अपने प्रत्यक्ष अनुभव से मैं इस नतीजे पर आया हूं कि जीवन तथा समाज की सारी समस्याएं हल करने की शक्ति इस प्रक्रिया में है। *(बीता इतिहास या भविष्य का सपना)*

दस्तावेज : तीन-संस्मरण

...गतांक से आगे

विनोबा के साथ दो दिन

❑ रामवृक्ष बेनीपुरी

जब मैं प्रवचन-सभा में जा रहा था, कुछ लड़के कम्युनिस्टों का एक पर्चा बांट रहे थे। उन लोगों ने संत से कुछ प्रश्न पूछे थे। संत ने उन्हें जवाब दिया—''बार-बार एक ही ढंग के प्रश्न ये लोग मुझसे पूछते हैं। शिव के गणों के बारे में कहा जाता है, वे भोले-भाले होते हैं, किन्तु मैं समझता हूं, दो-चार बार समझा देने पर वे भी समझ जाते होंगे। ये लोग तो 'शिव के गण' से भी गये-बीते प्रतीत होते हैं!''

संत लगभग डेढ़ घंटे तक बोलते रहे। मैं श्रोताओं के मुंह की ओर देख रहा था। लगता था, वे एक-एक शब्द पीने की चेष्टा कर रहे हैं। जाड़े का दिन, सूरज डूबने जा रहा था, हवा सिसककर गरीबों के कलेजे का कँपाने की चेष्टा कर रही थी। तो भी वे डटे हुए थे। उनकी आंखें मंच पर बैठी उसी मूर्ति पर अड़ी थीं, जिससे एक ज्योति निकलकर उनके मन-प्राण को जुड़ा रही थी। प्रवचन समाप्त हुआ, सभा विसर्जित हुई, तो भी बहुत-से लोग उस पड़ाव के आसपास चक्कर लगा रहे थे, जैसे वे किसी डोर से बँध गये हों, जो चेष्टा करने पर भी टूट नहीं पाती थी।

संत विनोबा प्रायः संध्या को कार्यकर्ताओं की बैठक कराते हैं। उस समय किये गये काम का लेखा-जोखा लेते हैं, कार्यकर्ताओं की शंकाओं का निवारण करते हैं और भविष्य के कार्य की रूपरेखा तैयार करते हैं। अभी मैं संत विनोबा पर लिखी गयी एक पुस्तक को पढ़ रहा था। उनके एक बाल-साथी ने बताया है, विनोबा को गणित से कैसा अनुराग था। काम का लेखा-जोखा लेते समय मानो उनकी वह गणित-बुद्धि जाग्रत हो जाती है। उन्हें गलत आंकड़े बताकर धोखा नहीं दिया जा सकता। आगे के कार्यक्रम में भी गणित का उनका यह स्नेह जागरित रहता है। किन्तु दरअसल उनकी बुद्धि का, चमत्कार तो तब जानने को मिलता है, जब कार्यकर्ताओं की शंकाओं के निवारण में वह बोलने लगते हैं।

संध्या को जब बैठक हुई, उन्होंने ताड़ लिया, यहां भूदान का कार्य दलगत दृष्टि से किया जा रहा है। कांग्रेस और सोशलिस्ट पार्टी दोनों के कार्यकर्ताओं से उन्होंने कहा कि दिल खोलकर बातें करो कि तुम लोग साथ मिलकर क्यों नहीं काम करते हो? मैं तो डॉक्टर हूं, यदि मुझसे बीमारी छिपाओगे तो आराम कैसे होगा। दोनों अपनी-अपनी बातें रखीं, साफ-साफ रखीं। कांग्रेस वालों ने कहा—''आप निश्चिन्त रहें, हम लोग अपने थाने का कोटा पूरा कर देंगे। सोशलिस्टों द्वारा आज ही कितनी जमीन मिली है, कुछ ही बीघे तो!'' सोशलिस्टों ने कहा—''भूदान में हमारे सभी साथियों की एक-सी आस्था भी नहीं है, फिर भी काम कर रहे हैं। हमारे साथ गरीब है, उनके पास जमीन ही कितनी है!'' यों ही कांग्रेस वालों ने कहा—''देखिये, ये लोग कितने झंडे ले आये हैं, जैसे इन्हीं की सभा हो।'' तो सोशलिस्टों ने कहा—''इन्होंने सारे पोस्टरों पर थाना कांग्रेस-कमेटी का नाम छपवा दिया है, जैसे आप इन्हीं के हों।'' हां, बातें खुलकर हुईं, साफ-साफ हुईं।

संत थोड़ी देर चुप रहे, फिर बोले, जैसे दिल खोल दिया हो। उन्होंने बताया—*''यह देश का दुर्भाग्य है कि कोई शुभ कार्य भी आप लोग मिलकर नहीं कर सकते। जब कभी मिलने की कोई चेष्टा की जाती है, उसमें विघ्न डाला जाता है।''* उन्होंने नेहरू-जयप्रकाश वार्ता की चर्चा की ओर बताया किस तरह दोनों दलों के कुछ लोगों ने उसका विरोध किया। फिर दान की छुटाई-बड़ाई की चर्चा करते हुए बोले—*''मेरे पास कोई क्षमता नहीं कि किसी को कोई सर्टिफिकेट दूं। दान में दाता का हृदय देखा जाता है, न कि दान की वस्तु का मूल्य। सुदामा के तंदुल का क्या मूल्य था! किन्तु कृष्ण ने उसे जिस प्रेम से खाया, क्या किसी राजा के व्यंजनों को उस प्रेम से खाया होगा। ईसा की कहानी भी ऐसी ही है। एक विधवा ने दिन-भर चर्खा कातकर जो दो पैसे पाये थे, जब उन्हें ईसा को दिया तो ईसा ने कहा था—''इससे बड़ा दान मुझे जीवन-भर नहीं मिला।'' अपने काम पर अभिमान मत आने दो, अभिमान का नाश होकर रहता है। इसी से मैं तो प्रभु से प्रार्थना करता हूं, मुझसे इतना बड़ा काम मत करवाओ कि मुझमें अभिमान आ जाय, तो इससे तो छोटी सेवा ही भली। डायरी में लिख लो, यदि तुममें यही मनोवृत्ति रही, मिल-जुलकर सेवा करने की वृत्ति नहीं बढ़ी तो इस देश में गुलामी का इतिहास फिर दुहराकर रहेगा!''*

जब यह बैठक समाप्त हुई, दोनों दलों के कार्यकर्ताओं में एक अद्‌भुत हृदय मंथन चल रहा था। दोनों दलों के लोगों से मुझे बातें करने का मौका मिला। लगा, संत के कथन ने उनके हृदय को छू लिया है, वहां से कालिमा कुछ हटी है। काश, यही भावना स्थायी हो पाती।

संत इस भूदान के साथ ही एक निर्मल विचार के बीज बोते चल रहे हैं। वह विचार यह है कि देश के निर्माण के लिए लोग दलों को भूल जायें, सब मिलकर काम करें और

अंत में वह दिन आये कि राजनीति में भी दलों की खींचतान न रह जाय। जो जनसेवी हों, सच्चे हों, निःस्वार्थ हों, वे ही लोग चुने जायें, उन्हींकी सरकार बने। जनतंत्र में दलबंदी की जो भावना जन्मजात है, वह दूर हो जाय। तभी वह सच्चा जनतंत्र होगा। हम लोग इस तरह की बात सुनने के आदी नहीं हैं। हमें बताया गया है कि जनतंत्र के साथ दलबंदी आवश्यक है, इतिहास भी यही बताता है। अतः यह बात हमारे हृदयों में उतरती नहीं है, मस्तिष्क उसे बाहर फेंक देता है। किन्तु आज जनतंत्र जहां जा रहा है, लोगों को एक दिन सोचने को मजबूर होना पड़ेगा। नये विचार, नई परिस्थिति की ही पैदावार होते हैं। विचारक तो उसे भाषा-मात्र देता है।

इधर पैदल चलना एकदम छूट गया था। दिन-भर थकावट के मारे चूर रहा, शाम को हल्का बुखार-सा हो आया। सोचता था, कल पैदल नहीं चल सकूंगा। किन्तु संध्या को, इस बैठक के बाद, जब संत के निकट गया, एक भाई ने पूछ दिया—'कल भी पैदल यात्रा होगी?' तब मुझसे 'ना' नहीं कहा गया।

दूसरे दिन फिर चार बजे भोर में उठा और संत के काफिलें के पीछे आ गया। इच्छा-शक्ति कितनी प्रबल होती है! शरीर-शक्ति पर वह किस तरह हावी हो जाती है, नहीं तो कल शाम को बुखार का अनुभव कर रहा था, आज इस भोर में दौड़ा चल रहा हूं।

आज अंग्रेजी साल की पहली तारीख थी। जब सूर्योदय हो रहा था, संत रुक गये। नये साल का यह नया सूरज। कितना सुंदर समाँ! हम खेतों के बीच होकर गुजर रहे थे। खेतों में सरसों फूल रही थी, गेहूँ, मटर, खेसारी की हरियाली कैसी मनोहारिणी थी! दूर पर ईख का खेत था। उस खेत से ऊपर, पूरबी क्षितिज पर सूरज का लाल गोला। वह धीरे-धीरे ऊपर उठ रहा था। हल्के सफेद कुहासे को छेदकर उसकी सुनहरी किरणें बिखर रही थीं। ओस के कण चम-चम कर रहे थे। संत पूरब-मुख पड़े हो गये और सूर्य देवता को निर्निमेष दृष्टि से देखते हुए वैदिक मंत्रों से स्तुति करने लगे। *संत का मुखमंडल उद्दीप्त हो रहा था। सभी लोग, संत से कुछ अलग, कतार बांधकर खड़े थे। झंडा लहरा रहे थे, भोर की हवा उन्हें दुलरा रही थी, हलरा रही थी। बिलकुल शांति! सबका ध्यान या तो उस सूरज के लाल गोले पर या संत के चेहरे पर। बेटी कुसुम ने मेरे कानों में फुसफुसाकर कहा—''इस पर कोई कविता लिख डालिये।'' मुझे वेद का वह वाक्य याद आ गया—''पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति।'' देवता के काव्य को देखो, जो न मरता है, न पुराना होता है। हां, यह सूरज—कितने दिनों से उगता जा रहा है, किन्तु आज भी कितना नवीन, कितना जीवंत दिखाई पड़ रहा है! यह देवता का काव्य है न! इस काव्य के सम्मुख संसार का सारा काव्य फीका है।*

संत की स्तुति समाप्त होती है, वह दही का जलपान करते हैं, चल पड़ते हैं। मैं भी चल रहा हूं, किन्तु बार-बार सोचता हूं, नये वर्ष का यह सूरज क्या सचमुच एक नये युग के आगमन की सूचना दे रहा है—उस युग की जब अंधकार नहीं होगा, जब कुहासा फटेगा, जब चारों ओर हरियाली होगी, रंगीनी होगी, सारी दुनिया इन ओसकणों की तरह जग-मग, झिल-मिल कर उठेगी।

रात्रि गांव में स्वागत हो रहा है। बीच के एक गांव में एक पुस्तकालय का उद्घाटन संत द्वारा किया जा रहा है। नामों की एक सूची पढ़ी जाती है। उस सूची को लेकर कुछ हलचल मचती है। अरे, मानव-मन इतना चंचल है। रात्रि को बात भोर में ही भुला दी गयी। क्या निराश हुआ जाय! क्या हताश हुआ जाय! नहीं, पुराना मैल धीरे-धीरे धुलेगा। धुलकर रहेगा, नहीं तो इतनी जल्द यह हलचल शांत क्यों हो गयी! छोटी बातों को भी एक क्षण में विशाल रूप धरते क्या नहीं देख चुका हूं। यहां तो एक हल्की-सी तरंग उठी ओर फिर आप ही शांत हो गयी। क्या वह शुभ दिन की सूचना नहीं है!

हम दूसरे पड़ाव पर आ पहुंचे। पड़ाव पर पहुंचकर संत का एक संक्षिप्त प्रवचन होता है। आज भी हुआ। संत ने एक बड़ी मार्मिक बात कही। तरह-तरह के झंडे थे। संत ने कहा—''इन झंडों के विविध रंगों को देखकर उदास मत होओ। झंडे तो अलग-अलग हैं, किन्तु एक हवा लहरा रही है। अनेकता में भी एकता का बोध होता है, यदि उसमें समरसता हो। अनेक स्वरों से ही तो संगीत सधता है।''

हां, कमी है चतुर उंगलियों की, जो अलग-अलग बंधे तारों को छेड़कर उनसे संगीत की सृष्टि कर दे। हममें अधिकांश लोगों की उंगलियां या तो एक तारे पर सधी हैं या उनमें वह कठोरता है कि इन तारों को तोड़ ही देती है। इसलिए आज संसार में झंकार के बदले हाहाकार ही छाया हुआ है।

थका हुआ हूं, लेटने की इच्छा हो रही है। साथी कहते हैं—हम लोगों के लिए कमरे नहीं हैं। मैं कहता हूं—अरे, संत ने कहा है न, 'सबै भूमि गोपाल की।' छोड़ो कमरे को, चलो मैदान के उस छोर पर। जाड़ा है, धूप में भी मजा आयेगा। एक साथी ने कम्बल डाल दिया, मैं लेट गया हूं। कानों में समवेत स्वर जा रहा है—

सुरम्य शांति के लिए जमीन दो, जमीन दो!
नवीन क्रांति के लिए जमीन दो, जमीन दो!

आंखें झप रही हैं। जब खुलती हैं, पाता हूं, झंडे गड़ गये हैं, हंडे चढ़ चुके हैं। किन्तु यह क्या! बगल में पंढरीजी बैठे हुए हैं, वह कहते हैं—आप लोग यहां अलग क्यों हैं? मैं अपनी वही टेक दुहरा जाता हूं—'सबै भूमि गोपाल की।' वह कहते हैं—नहीं, इससे लगाव का बोध होता है। मेरे साथी उन्हें बता रहे हैं—हमें कमरे नहीं दिये गये। मैं कहता हूं—तो क्या हुआ! ये झंडे और हंडे वहीं चलें, जहां पंढरीजी बता रहे हैं। झंडे अलग-अलग हैं, किन्तु हवा तो एक है। यदि इन्हें एक जमीन भी मिल जाय तो क्या कहने! वही होता है। अब सभी झंडे एक ही आंगन में गड़े हैं, एक ही हवा में लहरा रहे हैं।

काश हमारा दिल भी इसी तरह एक हो जाता! ❑

विश्व-शांति दिवस : 21 सितंबर

भक्ति और प्रेम के बिना शांति नहीं हो सकती

❑ विनोबा

हमारे देश में जो अनेक सत्पुरुष हो गये, निःसंदेह उनमें बुद्ध भगवान का विशेष स्थान है। आज यद्यपि ऊपर-ऊपर देखने वालों को दीखता है कि हिन्दुस्तान में बौद्धधर्म नहीं, पर यह केवल भासमात्र है। यहां बुद्ध भगवान की मुख्य शिक्षा सारी की सारी आत्मसात कर ली गयी है। उन्होंने तीन बहुत बड़ी बातें हमारे सामने रखीं।

1. वैर से वैर नहीं मिटता : एक स्पष्ट विचार उन्होंने यह रखा कि वैर से कभी वैर शांत नहीं हो सकता। यह कोई नई बात नहीं थी। उनके पहले भी यह बात हिन्दूधर्म के मूलग्रंथों में हम देखते हैं। लेकिन बुद्ध ने अत्यन्त स्पष्टता के साथ किसी प्रकार के अपवाद के बिना इसे रखा। निरपवाद धर्म के तौर पर उन्होंने यह बात दुनिया के सामने रखी। यही बात ईसामसीह ने पांच सौ साल बाद स्पष्ट शब्दों में रखी। और उसे संतों ने भी बार-बार दुहराया है। फिर भी दुनिया में लोग निःसंशय न बन सके। वे सोचते हैं कि मौके पर वैर का प्रतिकार वैर से ही करना पड़ता है। वह टल नहीं सकता। लेकिन अब विज्ञान के कारण लोगों के मन में शंका पैदा हो गयी है कि हिंसा से प्रश्न कहां तक हल होगा? इसलिए इस समय बुद्धदेव का यह संदेश बड़ा ही महत्त्व रखता है। दीख रहा है कि उसके अमल के लिए दुनिया तैयार हो रही है। बीच में हजार साल नाहक नहीं गये, लोग चिन्तन-मनन करते रहे। लेकिन अब समय आया है कि सामाजिक तौर पर उसका अमल कैसे किया जाये, यह सोचा जाये। अब निर्वैर प्रतिकार सूझ रहा और उसका भी एक शास्त्र सूझ रहा है। हम उम्मीद करते हैं कि बुद्ध भगवान का अवतार-कार्य अब शुरू हो रहा है।

बुद्ध भगवान ने दुनिया के लिए जो संदेश दिया, उसे उन्होंने अपने जीवन से निर्माण किया था। उन्होंने वह संदेश उस समय दिया, जिस समय हिन्दुस्तान का सारी दुनिया के साथ विशेष संबंध नहीं था। उस समय दुनिया को उस संदेश की इतनी आवश्यकता भी नहीं थी। लेकिन आज सारी दुनिया को उसकी आवश्यकता है। उनका वह संदेश है—'वैर से वैर नहीं मिटेगा, क्रोध से क्रोध नहीं जायेगा, झूठ से झूठ नष्ट नहीं होगा।' वैर से वैर बढ़ेगा और क्रोध से क्रोध सुलगेगा। इसलिए वैर का मुकाबला प्रेम से, क्रोध का मुकाबला शांति से और असत्य का मुकाबला सत्य से ही करना होगा।

पचास साल पहले हिन्दुस्तान में 'बुद्ध जयंती' नहीं होती थी, लेकिन इन दिनों यह शुरू हुई है। कारण स्पष्ट है, भगवान बुद्ध के संदेश का उपयोग आज बहुत है, ऐसा हम महसूस करने लगे हैं। उनका यह उपदेश नया नहीं है। गीता ने भी कहा है—*'निर्वैरः सर्वभूतेषु।'* निर्वैर बनने का आदेश वेदों ने भी दिया है। संतों ने भी इसे अपने जीवन में उतारा था। फिर भी दुनिया का हाल बदला नहीं। क्योंकि व्यक्तिगत जीवन में यदि कोई निर्वैर बन भी गया, तो लोग उसका आदर करते थे, फिर भी उसकी वह बात व्यावहारिक नहीं मानते थे। 'निर्वैर होना चाहिए' इसे वे अस्वीकार तो नहीं करते थे, पर आचरण में नहीं लाते थे।

''बात यह है कि जब तक वैर के कारण नहीं मिटते, तब तक वैर मिट नहीं सकता। कोई अत्यंत प्यासा हो और उसे अगर स्वच्छ, निर्मल पानी न मिल रहा हो, तो वह गंदा पानी भी पी लेता है। उसकी प्रथम मांग तो स्वच्छ पानी की होती है, लेकिन वह न मिले, तो गंदे पानी पर भी उसका चित्त राजी हो जाता है। इसी तरह दुनिया को भी वैर की कोई भूख नहीं है। समाज में आग लगे ऐसा कोई भी जानबूझकर नहीं चाहता। लेकिन दुनिया के कुछ सवाल हैं; वे अगर शांति से हल हो जाते हैं, तो वह शांतिमय मार्ग से चलने के लिए तैयार है। किन्तु यदि वे मसले शांति से हल न हों तो भी दुनिया शांति कायम रखे, यह हो नहीं सकता। *इसलिए हमें ऐसी युक्ति ढूंढ़नी चाहिए, जिससे शांति स्थापित हो, शांतिमय शक्ति पैदा हो और दुनिया के अत्यन्त कठिन मसले सुलझ जायें। ऐसा किये बगैर अहिंसा की शक्ति के प्रति दुनिया को विश्वास नहीं होगा।'' इसलिए हमने भूदान यज्ञ प्रारम्भ किया। भूदान यज्ञ निर्वैरता के मार्ग से मसले हल करने की कोशिश है।* यह आन्दोलन शांति की तलाश के लिए चल रहा है। वह शांति में भरी शक्ति की तलाश कर रहा है। इसलिए हम गांव-गांव जाते हैं, प्रेम से समझाते हैं और भूमिहीनों के लिए जमीन मांगते हैं। इस तरह भूमिहीनों को जमीन मिल जायेगी तो शांति कायम रहेगी। किन्तु 'शांति रखो, निर्वैरता से रहो' ऐसा केवल कहते चले जायें तो शांति कैसे रहेगी? आज तक तो हम दूसरों से छीनते-बटोरते रहे, संकुचित भावना रखी। यह संकुचित भावना विज्ञान के जमाने में शोभा नहीं देती। विज्ञान ने संकीर्णता कम की है। उससे बुद्धि व्यापक हो गयी लेकिन हृदय अभी संकुचित ही रहा है। अतः हर एक को तालीम मिलनी चाहिए कि 'देने से निर्वैरता आयेगी।' उसके बगैर भगवान बुद्ध का संदेश कोरा ही रहेगा, अमल में नहीं आयेगा।

भगवान बुद्ध के विचार की जयंती हम आज मनाते हैं; क्योंकि उसमें निर्वैरता की ऐसी अमर कल्पना है कि उसके आधार से मानव आगे बढ़ सकता है। दुनिया में जैसे-जैसे अधिक वैर बढ़ेगा, वैसे-वैसे इसका भान होने वाला है। बढ़ता हुआ विज्ञान हमें निर्वैरता या विश्वव्यापी वैर, इनमें से किसी एक को चुनने की आज्ञा देता है। जितनी-जितनी विज्ञान की प्रगति होगी, उतने-उतने 'गीता' और धम्मपद पढ़े जायेंगे। क्योंकि उनमें अमर मूल्य है, अमर तंतु है।

2. तृष्णाक्षय : दूसरी बात हमारे सामने उन्होंने यह रखी है कि हम तृष्णा बढ़ाते जायेंगे, तो दुःख बढ़ेगा। इसलिए उत्तरोत्तर

आवश्यकताएं बढ़ाते चले जाने से लाभ नहीं। यह बात संतों ने दुहराई है और धार्मिक पुरुषों ने भी मानी है। लेकिन कहना पड़ता है कि इस बात के लिए अभी लोकमानस तैयार नहीं है। हिंसा मिटनी चाहिए, यह भावना तो लोगों में आयी है। पर तृष्णा नहीं बढ़नी चाहिए, यह बात निश्चय के तौर नहीं आयी है। बल्कि इससे उल्टी आशा करते हैं कि हम आवश्यकता खूब बढ़ा सकते हैं, फिर भी निर्वैर जीवन बिताने की युक्ति निकाल लेंगे।

मैं मानता हूं कि यह मृगजल है। अंत में यही सिद्ध होगा कि तृष्णा से वैर अवश्य बढ़ेगा। हर हालत में तृष्णा बढ़ाने से दुःख ही पैदा होगा। यह दूसरी बात है कि परिस्थिति के अनुसार साधन और औजार में फर्क पड़ते हैं। लेकिन पालकी में बैठने की सहूलियत थी। इन दिनों हवाई जहाज में बैठते हैं। लेकिन पालकी के लिए तृष्णा थी और वह सताती थी, वैसे ही हवाई जहाज में बैठने की तृष्णा भी होगी और समाज को सतायेगी। पहले लोगों को गहने पहनने की वासना थी। मान लीजिए अब उसी तरह गहने पहनेंगे तो जंगली मालूम होंगे। इसलिए वह वासना दूर हो जायेगी, ऐसी आशा करते हैं। परंतु उसके बदले कैमरा होना चाहिए, यह वासना तकलीफ देगी, तात्पर्य, बाह्य पदार्थ के उपयोग के विषय में जीवन उत्तरोत्तर बदलता चला जायेगा इसमें हर्ज नहीं, परंतु वासना बढ़ाने में अवश्य पतन होगा। जीवन सुधारने का प्रयत्न बाहर से जरूर करना चाहिए, पर वह तृष्णारहित हो। मुझे डर है कि यह विचार अभी स्पष्ट रूप से लोगों के सामने नहीं आया है। जब मनुष्य को निर्वैर-वृत्ति की प्यास लगेगी और मैत्रीभाव की जरूरत मालूम होगी, तभी तृष्णारहित होने की प्यास लगेगी।

3. बुद्धि की कसौटी पर कसें : तीसरी बात बुद्ध भगवान ने हमारे सामने यह रखी कि हर चीज को बुद्धि की कसौटी पर ही कबूल करना चाहिए।

तीनों सिखावनें हिन्दुस्तान के लिए नई नहीं है। उन विचार के तौर पर हिन्दुस्तान ने स्वीकार कर लिया है। वे चीज हमारे आचरण में नहीं आयीं, पर वे हमारे विचार में अवश्य आया और हिन्दूधर्म ने उसे उत्तम अंश भी माना है। अगर हम ठीक ढंग से देखें तो स्थितप्रज्ञ के लक्षणों में भी यही चीज हैं। कहना यह चाहिए कि बौद्ध साहित्य में जो तीन शब्द बार-बार आते हैं, वे तीन शब्द स्थितप्रज्ञ के लक्षणों में आते हैं—प्रज्ञा, भावना और निर्वाण।

बौद्ध धर्म में इन तीनों शब्दों का जो संग्रह किया गया, उसका मूल आधार गीता है। इसमें जो निर्वैरता का भाव है, वह सारा गीता के 'भावना' शब्द में आ जाता है। उसका अर्थ भक्ति और प्रेम भी है। उसके बिना शांति नहीं हो सकती, ऐसा स्थितप्रज्ञ के लक्षण में कहा गया है। तृष्णा के निरसन की बात तो बुद्ध भगवान ने बार-बार कही। पहले से आखिर तक काम से मुक्ति का अर्थ है, निर्वाण। तीसरी बात स्पष्ट शब्दों में कहा है—प्रज्ञा पर बहुत जोर दिया गया है। 'स्थितप्रज्ञ' शब्द का अर्थ ही है, प्रज्ञा स्थिर किया हुआ मनुष्य। इस तरह यह सिखावन हमारे समाज में मान ली गयी है। उस पर अमल नहीं हुआ परंतु होना चाहिए। मान्यता के निदर्शन के तौर पर हमने बुद्ध को अवतार माना है। ❑

पंकज की रिहाई का सवाल : मुख्यमंत्री हस्तक्षेप करें

अपने अन्य 18 पर्चाधारियों के साथ पंकज 20 जुलाई, 2016 से बगहा जेल, प. चंपारण में बंद हैं। सभी पर दफा 307 सहित एक दर्जन धाराएं लादी गयी हैं। 3 नवंबर, 2015 को लगभग 400-500 भूमिहीन पर्चाधारी किसान सलहा बरियरवा गांव, अंचल बगला-1 में स्थित 30 एकड़ भूमि पर लगायी गयी फसल काटने गये थे, जिसमें महिलाएं भी शामिल थीं। वर्ष 2015 में ही 27 जून को भूमि सत्याग्रह द्वारा इस तीस एकड़ जमीन पर पर्चाधारियों ने धान की फसल लगायी थी। धान काटने के दिन अंचल अधिकारी ने कहा कि जमीन पर धारा 144 लगा हुआ है, इसलिए पर्चाधारी काटी गयी फसल जमा करा दें। अंचल अधिकारी ने वहीं पर पेड़ के नीचे यह वार्ता की। इस वार्ता में इलाके के कई प्रबुद्धजन व पंकज भी शामिल थे। वार्ता में अंचल अधिकारी ने कहा था कि प्रशासन न्यायपूर्वक जनता का भूमि पर अधिकार सुनिश्चित करायेगा। सभी भूमि सत्याग्रहियों ने प्रशासन द्वारा बतायी गयी गाड़ी पर कटी हुई फसल को जमा किया और अपने घर को लौट गये।

आगे पता चला कि अंचल अधिकारी ने पंकज सहित 18 भूमिहीन पर्चाधारियों पर झूठी प्राथमिकी दर्ज करा दी है। प. चंपारण में ऑपरेशन दखल दहानी के तहत लगभग पौने दो लाख दावे किये गये हैं। ये दावे उन्हीं भूमिहीनों के हैं, जिन्हें भूमि पुनर्वितरण कार्यक्रमों में जमीन के एक हिस्से का सरकार या भूदान से परचा मिला हुआ है। जिन पर्चाधारियों की जमीन पर दबंगों व भूमि माफियाओं द्वारा अवैध कब्जा किया गया है, उस भूमि पर पर्चाधारियों को कब्जा दिलाने हेतु सत्याग्रह अनिवार्य व स्वभाविक है। पर्चा दिया तो कब्जा भी दो, यह राज्य स्तरीय भूमि सुधार कोर कमेटी की भावना का एक अंश है। इस कोर कमेटी में दो दर्जन से अधिक सदस्य हैं और इसके अध्यक्ष भूमि सुधार व राजस्व विभाग के प्रधान सचिव श्री व्यास हैं। कोर कमेटी और राजस्व विभाग दोनों ने ऑपरेशन भूमि दखल दहानी को सफल बनाने हेतु अवैध दखलकारियों के खिलाफ सत्याग्रह की अपेक्षा की है। पंकज भी इस कोट कमेटी के सदस्य हैं।

इस तरह नीतीश कुमार की सरकार, राजस्व विभाग तथा राजस्व के कर्मी जिला कलेक्टर, अंचलाधिकारी सहित राजस्व के कर्मियों का यह दायित्व था कि बगहा अंचल के इस मामले के निष्पादन में सत्याग्रहियों की मदद करते। परंतु इन सत्याग्रहियों के साथ औपनिवेशिक काल की तरह दुश्मन जैसा बर्ताव किया जा रहा है।

पंकज सहित जिन साथियों को मुकदमे में फंसाया गया है, वह राज्य स्तरीय सरकारी अभियान ऑपरेशन दखल दहानी के साथ प्रशासन व राजस्व विभाग की धोखाधड़ी है। मुख्यमंत्री को इस मामले में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता है। वह खुद ऐसे मामले की जांच करायें व सरकार की पहल से ऐसे मुकदमे वापस लें। मुख्यमंत्री प. चम्पारण के जिला प्रशासन और राजस्व विभाग के भटकावपूर्ण बातों से बचकर सामाजिक न्याय के पक्ष में काम करें।

बहरहाल जिला जज ने सबकी जमानत खारिज की है और सत्याग्रहियों ने पटना उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

–स. ज. प्रतिनिधि

श्रद्धांजलि

सर्वोदय साधक कृष्णराज मेहता

❑ महादेव विद्रोही

सर्वोदय साधक श्री कृष्णराज मेहता का 6 सितंबर, 2016 को पुणे में निधन हो गया। वे 96 वर्ष के थे। श्री कृष्णराज भाई का जन्म 26 नवंबर, 1920 को माता भिरवी देवी एवं पिता मोहनराजजी मेहता के घर राजस्थान के पाली जिले के खीमेल में हुआ।

आपने दसवीं कक्षा तक जोधपुर के दरबार हाईस्कूल में तथा पुणे के फर्गुसन कॉलेज में उच्च शिक्षा प्राप्त की। 1940 में आपका विवाह उषा लोढ़ा के साथ हुआ। सर्वोदय परिवार प्यार से उषा बहन को 'बाईजी' के नाम से संबोधित करता था।

महात्मा गांधी के बुलाने पर आप मार्च 1942 में सेवाग्राम आश्रम गये। उनके दर्शन-लाभ के बाद बातचीत की, बापू ने आपको टटोलते हुए एवं सावधान करते हुए कहा कि यहां (सेवाग्राम) विश्व की अविरोधी देश-सेवा की शिक्षा होती है, अर्थात् जिस सेवा से किसी का भी अहित न हो। इस मुद्दे पर स्वीकृति पाने पर बापू ने दूसरी शर्त रखी, देश-सेवा कोई खेल नहीं है। इसके लिए जीवन-समर्पण की तैयारी होनी चाहिए। देश-सेवा हेतु जीवन समर्पण की तैयारी बताने पर बापू ने फिर एक चेतावनी दी कि आश्रम जीवन के लिए 'एकादश-व्रत' का पालन अनिवार्य है। इन सभी शर्तों पर स्वीकृति पा लेने के बाद बापू ने आपको आश्रम-प्रवेश की अनुमति दे दी। इस प्रकार आत्मोदय एवं सर्वोदय के लिए महात्मा गांधी द्वारा मिली यह प्रथम दीक्षा थी। महात्मा गांधी ने बाद में श्री कृष्णराज मेहता को आचार्य विनोबा से मिलने का सुझाव दिया। आचार्य विनोबा से मिलने आप सुरगांव (वर्धा) गये। वे वहां गांधी द्वारा बतायी गयी सारी रचनात्मक प्रवृत्तियों को क्रियान्वित कर रहे थे। सुरगांव में आपने पहली बार संत विनोबा के दर्शन किये। वहां एक सप्ताह आचार्य विनोबा के सम्पर्क-सान्निध्य में रहने का सौभाग्य आपको प्राप्त हुआ। पवनार आश्रम से सुरगांव तक आते-जाते संत विनोबा से कई विषयों पर चर्चा होती रहती थी। उनके शास्त्रसंगत, तर्कसंगत एवं

रचनात्मक अभियान से आपकी जिज्ञासा एवं समस्याओं का समाधान ही नहीं हुआ, बल्कि हृदय अत्यन्त प्रभावित हो गया। उस समय संत विनोबा साहचर्य के दौरान आपकी सूझ-बूझ, तार्किकता और चिन्तन की गंभीरता को देखते हुए एक दिन अचानक ही कहा 'आपके लिए आश्रम के द्वार खुले हैं।' इस बात की जानकारी जब महात्मा गांधी को हुई तो उन्होंने सराहते हुए कहा कि 'यह विनोबा के द्वारा तुमको दिया गया एक बड़ा सर्टिफिकेट है।' वर्धा में गांधी एवं विनोबा से मिलने के बाद जब पूना लौटे तो कॉलेज की शिक्षा में आपको रुचि न रही। दो महीने पूना रहकर वापस परंधाम आश्रम, वर्धा आ गये। आचार्य विनोबा ने रचनात्मक प्रयोग हेतु वल्लभ स्वामी की मदद के लिए आपको सुरगांव जाने का परामर्श दिया। सुरगांव में आप 8 अगस्त, 1942 तक रचनात्मक कार्यों में लगे रहे। 9 अगस्त 1942 को 'भारत छोड़ो आंदोलन' शुरू हुआ। संत विनोबा ने आपको गांधी के 'करो या मरो' संदेश को वर्धा के गांव-गांव तक पहुंचाने की बात बतायी तथा सत्याग्रह-टोली तैयार करवाने को कहा। आप शिव-संकल्प के साथ इस काम में लग गये। भूमिगत रहकर आपने यह काम शुरू कर दिया। एक दिन (2 अक्टूबर को) सत्याग्रह करते हुए आपको पकड़ लिया गया तथा छह महीने कठोर कारावास की यातनाएं भोगीं।

अप्रैल, 1943 में जेल से छूटने के बाद भी आप आजादी के आंदोलन एवं रचनात्मक प्रवृत्तियों से जुड़े रहे। बंबई के श्री केदारनाथ से प्रभावित होकर, खादी-ग्रामोद्योग केन्द्र (कोराकेन्द्र) में बतौर व्यवस्थापक का काम करने लगे। महात्मा गांधी की शहादत के बाद आचार्य विनोबा की प्रेरणा से 'सर्वोदय समाज' तथा 'सर्व सेवा संघ' का निर्माण हुआ। इस सर्व सेवा संघ का पहला मंत्री वल्लभ स्वामी को बनाया गया। सन् 1949 में संत विनोबा एवं वल्लभ स्वामी का कोराकेन्द्र (बम्बई) में आना हुआ। इन दोनों महापुरुषों ने सर्व सेवा संघ के लिए आपको वर्धा चलने का आग्रह किया। इस प्रकार आप बम्बई से गोपुरी, वर्धा (जहां सर्व सेवा संघ का दफ्तर था) आये। गोपुरी, वर्धा में कार्यकर्ताओं ने सामूहिक साधना की दृष्टि से 'साम्ययोगी' परिवार का प्रयोग किया था। इस प्रयोग में आप अपनी पत्नी उषा देवी तथा दो साल की पुत्री मीरा के साथ शामिल हुए। राजस्थानी रूढ़िग्रस्त परिवार से आने के बावजूद, उषा देवी ने इस कठिन त्यागमय जीवन को पूरे समर्पण भावना के साथ स्वीकार किया। एक साल के बाद सर्व सेवा संघ का कार्यालय सेवाग्राम में स्थानांतरित किया गया। वहां बापू के सेवा एवं ज्ञान के समवाय की दृष्टि से शुरू किये गये रचनात्मक प्रयोगों में आप भी शामिल हुए।

श्री कृष्णराज भाई सर्वोदय आंदोलन के मनीषियों में से थे। उन्होंने अखिल भारतीय भूदान यज्ञ समिति के संयोजक, सर्व सेवा संघ प्रकाशन के संयोजक, गांधी विद्या संस्थान एवं सोखोखारा आश्रम के कोषाध्यक्ष जैसे महत्त्वपूर्ण जिम्मेवारियों को निभाया।

आपने 'जयजगत', 'आत्मोदय से सर्वोदय', 'अहिंसा समवाय' आदि महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का लेखन/संपादन किया।

भाईजी के जाने से सर्वोदय परिवार ने अपना मार्गदर्शक एवं अभिभावक खो दिया है। पूरा सर्वोदय परिवार अश्रुपूर्ण नेत्रों से उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

दुख की इस घड़ी में सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) उनके परिवारजनों के प्रति अपनी हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है। ❑

अणुबम बनाम शांति

चेर्नोबिल : भारत के लिए सबक

❑ **नारायण भाई**

नारायण भाई का यह लेख 25 दिसंबर 1986 के सप्रेस बुलेटिन में प्रकाशित हुआ था। तकरीबन तीन दशक बाद भी यह लेख प्रासंगिक बना हुआ है क्योंकि भारत सरकार एक बार पुनः परमाणु के कथित शांतिपूर्ण उपयोग से बिजली उत्पादन करने में प्राणप्रण से जुटी है। इस बीच जापान के फुकिशिमा परमाणु संयंत्र दुर्घटना भी सरकारों को अपने निर्णय पर पुनर्विचार हेतु बाध्य नहीं कर पायी है। विश्व शांति दिवस 21 सितंबर के अवसर पर यह पूज्य नारायण भाई की स्मृति को समर्पित है। **–कार्य. सं.**

अप्रैल, 1986 में रूस के चेर्नोबिल में हुई भीषण परमाणु दुर्घटना ने भारत को बहुत सबक सिखाये हैं। पहला सबक तो यह सिखाया कि 'शांति के लिए' अणु कार्यक्रम भी जनता के लिए खतरे से खाली नहीं है। दूसरा सबक यह कि हर परमाणु रिएक्टर में गफलत एवं दुर्घटना होने की संभावना बनी रहती है। तीसरा सबक यह कि ऐसी दुर्घटना होने पर विश्व भर के अणु उद्योग के समर्थक एकजुट होकर जनता से उस सत्य को छिपाने का प्रयास करते हैं। चौथा सबक यह कि दुर्घटनाओं के दुष्परिणामों से बचने के लिए हमारेपास न तो पर्याप्त साधन है, न कानूनी व्यवस्था है। और शायद सबसे बड़ा सबकयह सीखने को मिला कि इने-गिने तबको तथा *राजनैतिकों के निर्णय पर आधारित (केन्द्रीय) व्यवस्था अंततः आम जनता को बंधक में रखनेवाली जनतंत्र विरोधी तानाशाही व्यवस्था सिद्ध होती है।*

आइए हम इन सबको थोड़ा निकट से देखें। 'शांति के लिए परमाणु' यह बड़ा भ्रामक शब्द है। वास्तव में परमाणु शक्ति पैदा करने वाले हर देश में और विशेष कर अमेरिका और रूस में शांति के लिए अणु और शस्त्रों के लिए अणु का चोली-दामन का संबंध रहा है। यद्यपि भारत की घोषित नीति 'शांति के लिए अणु' की ही रही है। पर हमारे यहां भी परमाणु के लिए होने वाले शोध का बहुत सारा खर्च सुरक्षा खाते में पड़ता है। हमारे नेता लोग बीच-बीच में यह भी आश्वासन देते रहते हैं कि हम चाहें जिस समय अणु बम बना सकते हैं। अणु कचरे को 'रिसाइकिल' करने की प्रक्रिया ऐसी है कि जिसमें अणुबम के लिए कच्चा माल तैयार हो जाता है।

बहरहाल यहां सोचने लायक विषय तो यह है कि सिर्फ अणुअस्त्र कार्यक्रम की नहीं शांति के लिए अणु कार्यक्रम भी खतरे से खाली नहीं है। रूस का यह रिएक्टर 'शांति' के लिए ही बना था। उसमें यह दुर्घटना आज तक की दुर्घटनाओं में सबसे बड़ी थी। लेकिन यह कोई पराकाष्ठा की दुर्घटना नहीं थी। भविष्य में इससे भी अधिक भयंकर दुर्घटनाएं हो सकती हैं। यह भी नहीं कि *चेर्नोबिल की दुर्घटना इतिहास में प्रथम अणु दुर्घटना थी। दुनिया भर में आज तक छोटी-बड़ी चार हजार दुर्घटनाएं घट चुकी हैं। भारत में भी तीन सौ से अधिक बार छोटी-मोटी दुर्घटनाएं घटी हैं। अलबत्ता अणु वैज्ञानिक और राजनैतिक नेता इन्हें 'असाधारण घटना' कह कर उसकी भीषणता को छिपाना चाहते हैं, लेकिन जाहिर है कि नाम बदलने से गुण नहीं बदलता है।*

परमाणु रिएक्टरों फिर चाहे वह बिजली बनाने के लिए बम बनाने के लिए दुर्घटना होने की अनेक सम्भावनाएं रहती हैं। दुर्घटनाएं रहती हैं। दुर्घटना कितने प्रकार की हो सकती है। इसका अनुमान करके विशेषज्ञों ने बड़ी-बड़ी पोथियां तैयार की हैं। फिर भी अमेरिका में जब ब्राउन फेरी तथा थ्री माईल आइलैण्ड की दुर्घटनाएं हुईं तब यही कहा गया था कि ऐसी दुर्घटनाओं का जिक्र हमारी हैण्ड बुक में नहीं था। दुर्घटनाएं प्रमुखतः निम्न कारणों से हो सकती हैं।

पहला कारण यांत्रिकी गड़बड़ी। हमारे केवल एक तारापुर केन्द्र में ही अनेकों बार इस प्रकार की यांत्रिक गड़बड़ी हुई है। राजस्थान का एक अणु रिएक्टर तो यांत्रिक गड़बड़ी से बरसों तक जूझने के बाद और करोड़ों रुपये पानी करने के बाद इस साल नाकाबिल दुरुस्ती घोषित किया गया। अब उसे भय मुक्त करने के लिए इतना खर्च किया जायेगा, जो अनुमानतः उसे बांधने के खर्च से भी बढ़कर होगा। दूसरा कारण है, *मनुष्यकृत गलती।* वियेना में हुई विश्व अणु वैज्ञानिकों की सभा में रूसी वैज्ञानिकों ने यही रिपोर्ट दी कि चेर्नोबिल दुर्घटना इसी कारण से हुई थी। इस प्रकार का कारण बताने से जहां एक ओर यह भ्रम पैदा होता है कि परमाणु तकनीकी में यांत्रिक गड़बड़ी नहीं हो सकती, वहीं दूसरी ओर वह यह सिद्ध भी करती है कि हर रिएक्टर में मानवीय भूल के कारण दुर्घटना की संभावना बनी ही रहेगी। दुर्घटना का तीसरा कारण हो सकता है प्राकृतिक प्रकोप—जैसे भूचाल, बाढ़ या ज्वालामुखी विस्फोट। हम पाठकों का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहते हैं कि हमारे देश में दो अणु केन्द्र—नरोरा तथा काकरापार—ऐसे स्थानों पर बनाये गये हैं जो क्रमशः भूकम्प सम्भावना युक्त सीस्मिक जोन चार और तीन में बने हुए हैं। इनमें से एक स्थान तो वैज्ञानिकों की सलाह की अवहेलना कर केवल राजनैतिक कारणों से चुना गया था। यदि नरोरा में कोई बड़ी दुर्घटना हो तो गंगा घाटी का घनी जनसंख्या वाला क्षेत्र पीढ़ियों तक निकम्मा हो जायेगा। चौथा कारण हो सकता है शत्रु का आक्रमण। अगर शत्रु का सामान्य बम भी हमारे अणु ऊर्जा बनाने वाले संयंत्र को तोड़ दे तो उससे जो विकिरण फैलेंगे वह शत्रु के बम को अणु बम जितना ही भयानक बना देगा। पांचवां कारण आतंकवादियों द्वारा तोड़-फोड़ की कार्यवाही। जिस देश में प्रधानमंत्री तथा वरिष्ठ पुलिस अधिकारी आतंकवादियों के उत्पात के निशाने बन सकते हैं, उस देश में अणु केन्द्रों को

निशाने के खतरे से खाली कैसे माना जा सकता है?

चेर्नोबिल की दुर्घटना ने और भी कई ऐसी चीजें दुनिया के सामने प्रकट की हैं जो हर नागरिक को समझ लेनी चाहिए। रूस ने पहले तो कुछ दिन इस घटना को छिपाया। फिर जब यह असम्भव हो गया तब उसे कम करके दिखाने का प्रयास किया गया। आज से तीस साल पहले युराल पहाड़ियों पर घटी दुर्घटना को रूस ने सफलता से छिपाया था। लेकिन सत्य को छिपाना अब रूस की बात नहीं रही। ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस, केनेडा आदि हर देश ने अपनी-अपनी दुर्घटना के समय प्रायः इसी सत्य को छिपाने का प्रयास किया था। सौभाग्य से आज की दुनिया विज्ञान के कारण इतनी छोटी बन गयी कि इस प्रकार के प्रयास व्यर्थ सिद्ध होते हैं।

यूरोप, अमरीका तथा भारत के भी कुछ अणु वैज्ञानिक तथा नेताओं ने चेर्नोबिल की दुर्घटना के बाद यह भ्रम फैलाया कि यह घटना रूस में ही हो सकती थी हमारे यहां नहीं, जनता की आंखों में धूल झोंकने का ही प्रयास था। यह बात सही है कि हर अणु केन्द्र में कुछ भिन्न-भिन्न तकनीकें प्रयोग की जाती हैं। दुर्घटनाएं भी प्रायः विभिन्न कारणों से होती हैं। किन्तु कहना कि ऐसा हमारे यहां नहीं हो सकता सरासर गलत है। कहना कि रूस की तकनीक पुरानी थी, हमारी नयी है, फिर भी गलत है। हालांकि रूस के कुछ अणु रिएक्टर पुराने हैं, लेकिन जिन रिएक्टर में विस्फोट हुआ वह तो भारत के अधिकांश रिएक्टरों से नया यानी अभी तीन-चार साल पहले ही 'क्रिटीकल' बना था। दूसरा तर्क यह दिया जाता है कि हमारे यहां दोहरा कटेन्मेट है, वहां वैसा नहीं था। किन्तु यहां स्मरण रहे कि चेर्नोबिल की जिस दीवाल को फोड़ कर अग्नि शिखाएं लहरा उठी थीं, उनकी भार क्षमता 28 पौंड प्रति वर्ग इंच थी, जो कि हमारे संयंत्रों से प्रायः दूनी थी। हमारे यहां सारा दारोमदार 'केनू' रिएक्टर्स पर रखा गया है। केनेडा में इस प्रकार के रिएक्टर्स में भी दुर्घटना हो चुकी हैं।

चेर्नोबिल की दुर्घटना के विषय में यदि कोई एक अच्छी चीज हुई तो वह थी कुछ पराक्रमी लोगों द्वारा जान का जोखिम उठा कर भी उसका मुकाबला करना। यह अनुमान किया जा सकता है कि ऐसे साहसी लोग हमारे यहां भी निकल आयेंगे किन्तु वहां आस-पास की जनता को जिस शीघ्रता से हटाया गया वैसे स्थानांतरण की कोई व्यवस्था या पूर्व तैयारी हमारे यहां नहीं है। इस बात को तो हमारे प्रधानमंत्री ने भी स्वीकार किया है। ❑

बुद्ध मुस्कुरा रहे हैं

बुद्ध जयंती के दिन हुए पोखरण अणु विस्फोट से आहत नारायण भाई में भारतीय संस्कृति की मूल भावना करुणा में अगाध आस्था थी। गांधी की कर्मभूमि में हुए इस दूसरे परमाणु विस्फोट ने उन्हें विचलित तो किया लेकिन अंतरात्मा इस विश्वास से भरी हुई थी कि अंततः जीत उदारता की होगी। उनके जाने से निर्मित शून्य को सम्भवतः उनकी यह कविता थोड़ा-बहुत भर पायेगी। **–कार्य. सं.**

पोखरण के टीले पर बैठ
तथागत बुद्ध मुस्कुरा रहे हैं।
ढाई हजार वर्षों से वे गा रहे हैं मंत्र
करुणा के, समत्व के, प्रेम के।
उनकी आंखों के तले-
शक आये, यवन आये, आये हूण
पठान आये, गूजर आये, आये मुगलों के झुण्ड
गोरी और खिलजी भी आये।
जो आये सो इस करुणा के
महासागर में लीन हो एक बन गये,
दुश्मन थे जो दोस्त बन गये।
इनकी वाणी में, इनके गीतों में
इनके स्थापत्य में, इनकी कला में
इनके दर्शन में, इनकी कला में
समत्व और प्रेम का संगीत बज उठा।
लुटेरे आये और गये—
उनका नामोनिशान न रहा
इस करुणामयी संस्कृति में।
सूफी आये और आये संत
लोक हृदय में प्रवेश कर उन्होंने
स्थायी स्थान पाया लोक-गंगा में।
फिरंगी, फ्रान्सिसी और आये अंग्रेज।
जो गैर होकर रहे, वे उल्टे पांव गये।
लेकिन जाते जाते छोड़ गये
अपने स्वभाव को।
अंग्रेज गये और अंग्रेजियत रही
वह ही इन सहन में, भाषा में, शिक्षा में
और अब प्रकट हो रही है शस्त्रों की बुत-पूजा में
फिर एक कवि आया जिने विश्वप्रेम के गाये गीत।
एक दार्शनिक आया जितने मनुष्यता को
ऊपर उठाना चाहा देवत्व की ओर।
और एक महात्मा आया जिसने अंग्रेजों को चाहा,
लेकिन अंग्रेजियत को मिटाना चाहा
जिसने अपने शरीर की आहुति दी
हमारी संस्कृति को अमर रखने।
और आज उस तथागत बुद्ध की
मुस्कुराती आंखों के तले
भले ही एक नहीं, षड़रिपु की तरह
छः छः धमाके होते हों
भले ही ये धमाके हमारी आंखों में धूल झोंकते हों
लेकिन प्रेम की शक्ति अमर है,
उसके आगे द्वेष, घृणा मतांधता,
और हिंसा की शक्ति टिक नहीं सकती।
प्रेम की जीत होगी, एक एकता की जीत होगी—
जीत होगी उदारता की, जीत होगी दरियादिल की।
तब एक बार फिर शंख बज उठेगा
उस संस्कृति का जो समन्वयकारी है
जिसने द्वेष के आगे प्रेम की कभी हार नहीं मानी
जिसने वैर की आंधियों के बीच भी सदा
तथागत बुद्ध को मुस्कुराते पाया है।

यात्रा-वृतांत

दलितों की ऊना अस्मिता-यात्रा के समर्थन में सर्वोदयी

❑ जयंत दिवाण

9 अगस्त, 2016 को गांधी-विचार के हम 10 सर्वोदयी कार्यकर्ता, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान के अध्यक्ष जयवंत मठकर, सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष महादेव विद्रोही, लोकसमिति की नीता महादेव के नेतृत्व में सौराष्ट्र के ऊना गांव में घटी घटना को समझने के लिए तथा दलितों की अस्मिता-यात्रा के समर्थन में अहमदाबाद से रवाना हुए। प्रस्थान से पहले सर्वधर्म प्रार्थना की गयी। अहमदाबाद से ऊना पहुंचने में 14 घंटे लगे।

रास्ते में जिग्नेश मेवाणी, जिनके नेतृत्व में दलित अस्मिता-यात्रा जारी है, से मुलाकात हुई। उन्हें बुखार था। स्थानीय आरोग्य-केन्द्र में वे भरती थे। वहीं जाकर उनसे हमने बातचीत की। विजय दिवाण, जो सर्वोदयी कार्यकर्ता हैं और मृत जानवरों की खाल उतारते हैं, ने जिग्नेश से कहा कि दलित उत्पीड़न के विरोध में सर्वोदय जमात उनके साथ है। विजय दिवाण ने उनसे कहा कि महाराष्ट्र में दलितों ने मृत जानवरों की खाल उतारना कब से बंद कर दिया है। गुजरात के दलित भी अब यह काम करना बंद करें। जब जिग्नेश से पूछा गया कि उनका अगला कदम क्या है, तो उन्होंने कहा कि हमारी मांग है कि प्रत्येक दलित परिवार को पांच एकड़ जमीन सरकर दे, ताकि वे अपना-अपना भरण-पोषण कर सकें। अगर सरकार जमीन नहीं देगी, तो वे 'रेल रोको आंदोलन' शुरू करेंगे। महादेव विद्रोही ने जिग्नेश को सूचना दी कि भूदान की काफी जमीन गुजरात सरकार के पास है। सर्वोदय मित्रों की मांग है कि यह जमीन सरकार दलितों को बांटे। वे सरकार को औपचारिक निवेदन देकर यह मांग करेंगे।

जिग्नेश की उम्र 35 वर्ष है। सेवा-निवृत्त आईपीएस अधिकारी राहुल शर्मा यात्रा में उनके साथ चल रहे थे। जिग्नेश सर्वोदयी नेता दिवंगत चुनीभाई वैद्य के साथ काम कर चुके हैं। वह महादेव विद्रोही की बेटी मुदिता के मित्र हैं। जिग्नेश की इस यात्रा में आगे-पीछे पुलिस की काफी गाड़ियां चल रही हैं। रास्ते में जिग्नेश और उनके साथियों की सभाएं हो रही हैं। दलित समाज बड़ी संख्या में उपस्थित रहता है। मीठी वीरडी गांव आंदोलन का इलाका है, वहां सरकार ने बिजली के लिए अणु-ऊर्जा केन्द्र की स्थापना करने का निर्णय किया हुआ है। इस निर्णय का किसान विरोध कर रहे हैं। नीता महादेव इस आंदोलन से जुड़ी हुई हैं। हमारे खाने की व्यवस्था इसी गांव ने की।

रात में ठहरने की व्यवस्था गीर विकास मंडल के परिसर में की गयी थी। गीर विकास मंडल शिक्षण-संस्था है। मंडल के संचालक श्री भरतभाई भट्ट ने हमारा स्वागत किया। उनके साथ बातचीत हुई। उन्होंने कहा कि गांवों में बैलों की संख्या कम हो चुकी है। बैलों का इस्तेमाल खेती के लिए नहीं किया जाता। बैल छोड़ दिये जाते हैं। ये रास्तों में इधर-उधर भटकते रहते हैं। उन्होंने हमसे पूछा कि अगर दलित खाल निकालना बंद करेंगे, तो उन्हें अन्य रोजगार कैसे मिलेगा?

विजय दिवाण ने उनसे कहा कि बाबा साहेब अम्बेडकर के आवाहन पर दलितों ने महाराष्ट्र में खाल निकालना बंद किया, लेकिन वे भूखे मरे नहीं। वे मुम्बई गये। कपड़ा मिल, रेल विभाग, सेना में भरती हुए। अगर गुजरात के दलित खाल निकालना छोड़ेंगे, तो वे भी भूखे नहीं मरेंगे। कोई न कोई रास्ता खोज लेंगे। सवाल सिर्फ गोरक्षा का नहीं, जाति निर्मूलन का है।

दूसरे दिन 10 जुलाई 2016 को हम ऊना से मोटा समढियाला गांव गये। गांव जाने से पहले हम गांव से चार-पांच किलोमीटर दूरी पर उस जगह गये, जहां मृत जानवरों की खाल निकाली जाती है। इसी जगह पर उन चार दलित युवाओं को जब वे खाल निकाल रहे थे, पिटा गया था। यह जगह गांव से बहुत दूर टीले पर है। इस जगह मृत जानवरों की चीरफाड़ होने के कारण यहां जानवरों की हड्डियां व सींग बिखरे पड़े थे।

इस जगह को देखने के बाद हम गांव में आए। उन युवाओं के घर गये। वे चारों युवक खटिया पर बैठे पड़े थे। हमारे पहुंचने पर अगल-बगल के और भी कई लोग इकट्ठा हो गये। गांव में पुलिस का पहरा था। घायल युवक बीस-पचीस की उम्र के हैं। एक के हाथ पर प्लास्टर चढ़ा हुआ था। दो युवकों के, मारपीट के कारण कान के परदे क्षतिग्रस्त हो गये हैं। उन्हें कान का ऑपरेशन कराना पड़ेगा। युवकों ने बताया कि वे तीन मृत बैलों-गायों को उठाकर उसी वीरान जगह ले गये थे, जहां हमेशा से खाल उतारी जाती है। वे खाल उतार रहे थे कि इतने में तीस-चालीस युवकों ने उन्हें घेर लिया और उन पर लोहे के छड़ और लाठियों से हमला कर दिया। वे लोग कह रहे थे—तुम लोग जिन्दा गाय को मार रहे हो। वे अपने आपको गोरक्षक कह रहे थे। उनकी मारपीट की खबर गांव में पहुंची, तो दलित युवकों के पिता दौड़ते हुए घटना-स्थल पर पहुंचे। उन्हें भी पीटा गया। वे हाथ जोड़ रहे थे। गोरक्षक अंधाधुंध लाठी चलाते रहे। एक युवक के पिता को सिर पर चोट लगी।

वे कथित गो-रक्षक इन युवाओं को पीटते हुए मोटा समढियाला गांव ले आये और फिर अपने बड़प्पन का प्रदर्शन करने के लिए इन्हें लाठियों से पीटते-हांकते हुए ऊना गांव ले गये—जो 43 किलोमीटर दूर है। ऊना गांव के मेन रोड से इन्हें चौराहे तक ले गये। वहां पुलिस चौकी है। रास्ता-चौराहा भीड़ से भरा है। दुकानें हैं, फल-सब्जी के ठेले हैं, लेकिन किसी ने इन स्वघोषित गो-रक्षकों को रोकने की कोशिश नहीं की। पुलिस ने गो-रक्षकों को गिरफ्तार करने के बदले पिटे गये चार युवाओं को गिरफ्तार किया।

इस घटना से पूरे गुजरात में दलित आंदोलन ने जोर पकड़ा। 31 जुलाई को अहमदाबाद में महारैली का आयोजन हुआ।

इन चार युवाओं का नाम है—वशराम, रमेश, अशोक, बेचर। उनसे बातचीत करने पर जानकारी मिली कि इनके गांव में दलितों के 27 घर हैं। गांव छोटा है। खाल निकालने से इन्हें महीने में 14-15 हजार रुपयों की आमदनी होती है। ये युवा पढ़े-लिखे नहीं हैं।

इनके पास छकड़ा (बैलगाड़ी) है। जब कहीं जानवर मरता है, तब इन्हें खबर दी जाती है। छकड़े पर जानवर लादकर ये ले आते हैं और खाल उतारते हैं। एक जानवर की खाल के 300 रुपये मिलते हैं।

जख्मी युवाओं के पिता ने कहा कि उन्हें डर लगता है। उनकी जान को खतरा है। गांव का सरपंच आज तक उन्हें देखने तक नहीं आया। सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने उन्हें हिम्मत बंधाई। सेवाग्राम आश्रम के अध्यक्ष जयवंत मठकरजी ने कहा कि अगर वे गांव छोड़ना चाहते हैं, तो उनकी व्यवस्था 'सेवाग्राम आश्रम', वर्धा में की जायेगी। उन्हें खेती की जमीन दी जायेगी। बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था की जायेगी। वहीं सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, सर्व सेवा संघ और लोकसमिति ने मिलकर पचास हजार रुपये की मदद देने की घोषणा की।

वहां से लौटकर हम अहमदाबाद आये। लोकसमिति की अगुवाई में गांधीजनों द्वारा प्रायश्चित उपवास किया गया। साबरमती आश्रम के सामने ईमाम मंजिल के अहाते में 11 जुलाई, 2016 को दिनभर का धरना दिया गया। शाम को साबरमती आश्रम की प्रार्थना-भूमि पर प्रार्थना की गयी। ❑

वरिष्ठ गांधीवादी कृष्णराज मेहता नहीं रहे

स्वतंत्रता सेनानी व सर्व सेवा संघ प्रकाशन के पूर्व संयोजक कृष्णराज मेहता का 6 सितंबर, 2016 को पुणे में निधन हो गया। आप 96 वर्ष के थे।

मेहताजी आपातकाल के दौरान सर्व सेवा संघ प्रकाशन को अपना महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन दिया, जिसके कारण विषम परिस्थितियों में भी प्रकाशन सक्रियतापूर्वक गांधी-विचार साहित्य के प्रचार-प्रसार कार्य को आगे बढ़ाता रहा।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी के सभा भवन में 6 सितंबर 2016 को सायं 5.40 बजे संयोजक अरविन्द अंजुम के नेतृत्व में प्रार्थना-सभा का आयोजन किया गया। उपस्थित सभी प्रकाशन के कार्यकर्ता एवं परिसर निवासी सर्वधर्म प्रार्थना करने के पश्चात् दो मिनट का मौन रखकर अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की। **–स.ज. प्रतिनिधि**

गतिविधियां एवं समाचार

सर्व सेवा संघ कार्यसमिति की बैठक सम्पन्न :

सर्व सेवा संघ की दो दिवसीय राष्ट्रीय कार्यसमिति की बैठक 30-31 अगस्त, 2016 को वाराणसी स्थित सर्व सेवा संघ परिसर में सम्पन्न हुई। बैठक में उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, केरल, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, असम, झारखण्ड, बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, दिल्ली, गुजरात आदि राज्यों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

बैठक को संबोधित करते हुए सर्व सेवा संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष महादेव विद्रोही ने कहा कि कश्मीर की समस्या का हल शांति, सौहार्द के नजरिये एवं संवाद से ही सम्भव है। किसी भी प्रकार की हिंसा का समाधान किसी अन्य प्रकार की हिंसा के द्वारा नहीं हो सकता। किसी भी देश या स्थान को नरक बताना मानसिक अस्वस्थता की निशानी है।

श्री विद्रोही ने आगे कहा कि स्वाधीनता दिवस पर लालकिले से प्रधानमंत्री द्वारा दिये गये भाषण में बलूचिस्तान का जिस तरह उल्लेख किया गया, वह राजनीतिक अपरिपक्वता को दर्शाता है। इस अनावश्यक हस्तक्षेप के बहाने चीन को पाकिस्तान में आने का मौका मिलेगा।

कश्मीर के नागरिकों एवं नागरिक संगठनों से संवाद स्थापित करने के लिए सर्व सेवा संघ का एक प्रतिनिधि जल्द ही कश्मीर जायेगा। **–स. ज. प्रतिनिधि**

कब्जे से मुक्त होगा गांधी विद्या संस्थान :

31 अगस्त, 2016 को अपराह्न 2.30 बजे उच्च शिक्षा राज्यमंत्री श्री शारदा प्रसाद शुक्ला ने वाराणसी स्थित गांधी विद्या संस्थान का निरीक्षण कर परिसर में वृक्षा-रोपण किया।

सर्व सेवा संघ के सभाभवन में आयोजित कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए मंत्री महोदय ने कहा कि गांधी विद्या संस्थान को जल्द ही कब्जे से मुक्त कराया जायेगा और संस्थान में फिर से गांधी व जयप्रकाश नारायण के विचारों पर शोध शुरू होगा। इस विचारधारा के धरोहरों वाली संस्था को मरने नहीं दिया जायेगा।

उन्होंने आगे कहा कि गांधी व जयप्रकाश नारायण सिर्फ व्यक्ति नहीं थे, वे विचार हैं। सपा सरकार इन महापुरुषों के विचारों वाली है। इसके लिए मुख्यमंत्री ने मुझे यहां भेजा है। देश का सबसे समृद्ध पुस्तकालय आज बंद पड़ा है। आवश्यकता के अनुसार इस पुस्तकालय में नयी व पुरानी विचारधाराओं की पुस्तकों को खरीद कर रखा जायेगा। ताकि नई पीढ़ी को गांधी और जेपी के बारे में पूर्ण जानकारी मिल सके।

कार्यक्रम को सम्बोधित कर रहे संस्थान के पूर्व निदेशक व वरिष्ठ गांधीवादी डॉ. रामजी सिंह ने मंत्री के समक्ष गांधी विद्या संस्थान के बारे में अपनी व्यथा रखी।

सभा में सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष महादेव विद्रोही, वरिष्ठ पत्रकार रामदत्त त्रिपाठी, आईसी द्विवेदी, सुरेन्द्र विक्रम सिंह, नवीन चंद्र तिवारी, विजय भाई, शिवविजय सिंह, अरविन्द अंजुम, अरुण कुमार मिश्र, मो. शेएब, पुतुल कुमारी, अशोक मोती, मुनीजा रफीक खान, आनन्द तिवारी सहित काफी संख्या में स्थानीय गांधी-जेपी विचारप्रेमी उपस्थित रहे। **–स. ज. प्रतिनिधि**

मोतिहारी जिला सर्वोदय मंडल का गठन :

गांधी स्मारक एवं संग्रहालय, मोतिहारी के सभा भवन में नये अध्यक्ष ब्रजकिशोर सिंह की अध्यक्षता में बैठक सम्पन्न हुई। बैठक में जिला सर्वोदय मंडल की नयी कार्यसमिति का सर्वसम्मति से गठन हुआ। गठित समिति गांधी-विनोबा-जेपी के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने व चम्पारण सत्याग्रह के शताब्दी वर्ष में आयोजित कार्यक्रमों की सफलता हेतु काम करेगी।

–विनय कुमार

तीन कविताएं

यह सदी

❑ रिंकू चटर्जी

ओढ़ कर अंधी प्रतीक्षा आंख में
यह सदी जमकर
अहिल्या हो गयी
स्थिर हुए पाषाण
नयनों से अहिल्या
बाण से बिंधे हिरण को देखती है
जो न हँस पायी
खुशी के एक भी क्षण
राख होती
उस किरण को देखती है

देखती है कैकयी के कोप काले
देखती का पुरुष नृप का
बाध्यताएं
राजभवनों से निष्कासित
जो अर्थ विगलित सभ्यताएं
शाम गौतम से अनर्गल भेंट में
पा रो रही
कब से अचानक सो गयी
सुन रही रोदन
सियारों के अनर्गल
भोगती ऋषि क्रुद्ध की निविर्चताएं
अनुबुझी इच्छा,
सुलगती वर्जनाएं मन धुआं देता,
असीमित हैं व्यथाएं
राम तो भाए नहीं
वन वीहड़ों में असुरगण
दैनन्दिन में छा गये रो रहे शिशु
नारियां कैसी बिलखती
हम यहां किन जनपदों में
आ गए
फैलती वन-गांव,
बस्ती में नगर में ये हवा
विष बेलि कैसा बो गयी? ❑

अशेष कब हुआ शेष

❑ अपर्णा अनेकवर्णा

पहचानी छवियां धुंधलाने लगी हैं
श्वेत-शाम होने लगी हैं
चीन्हीं आकृतियां रंग थकने लगे
अपनी छतरियां ताने
बहिष्कृत कर दिये गये हों
उस दुनिया से जहां स्वतः उग आये थे
एक दिन और मुंह मोड़ने भर
की इच्छा नहीं बची अब
सुना है एक पहाड़ी गांव के
किसी बीते समय में
मृगया में मारा गया था
एक कस्तूरी मृग जब समिधा
बना और फिर भोग...
मह-मह से उठे थे दिक दिगंत
वो अशेष कब हुआ शेष...
या कहीं बीच ही में बचा था
स्मृति बन आखेटक भी
थम से गये थे सहम
लव कहां मरता है
कभी कहीं समय के किसी एक बीती परत में
सिमट जाता है बस कभी-कभी
अचानक ही कुलांचे भर जाता है
एक सलोने श्याम मृग सा...
एक क्षण से निकल विलीन हो जाता है
किसी दूसरे क्षण की हुई गुफा में... ❑

सुनो! लड़को!!

❑ नीलम मैदीरत्ता 'गुँचा'

सुनो! लड़को!!
अच्छा नहीं लगता तुम्हार घर आना
किसी भी लड़की के मां-बाप को
उनकी अनुपस्थिति में क्योंकि जानते हैं वो
कि नहीं सिखाया गया तुम्हें
किसी भी स्कूल में किसी भी क्लास में
ना ही सिखाया तुम्हारे मां-बाप ने
कि लड़की की देह होती है
रूई से भी ज्यादा सफेद और कोमल
तुम्हारे जबरदस्ती छूने से
हो जाती है मैली
और चीख जाती है लड़की
और यह चीख भाषण नहीं होती
ताउम्र साथ रहती है....
आओ पूछो अपने मां-बाप से
कि काहे ना सिखाया मुझे कुछ
बहना को तो तुम सिखाती रही सब कुछ
मुझे क्यों नहीं सिखाया?
आज लोगों की आंखों में
देखता हूं प्रश्नचिह्न अपने लिए
पूछते हैं वो कि क्यों आये हो?
कैसे आये हो?
कुछ काम-वाम नहीं है क्या? ❑

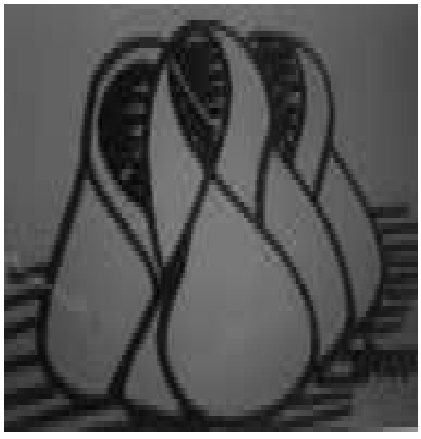

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार / कार्यकारी संपादक : अशोक मोती।